सोवियत संघ में पूंजीवादी पुनर्स्थापना

गैर-सर्वहारा दृष्टिकोणों की आलोचना

I

रूस में महान अक्टूबर समाजवादी क्रांति के बाद अस्तित्व में आये समाजवादी समाज को देखने का नजरिया अलग-अलग वर्गों का अलग-अलग रहा है। पूंजीपति वर्ग के प्रतिनिधि इसे भीषण विपदा बताते रहे हैं। वे पूंजीवाद के ही एक मानवीय प्रकृति के अनुकूल व्यवस्था होने का प्रचार करते रहे हैं। यही कारण है कि जब 1991 में सोवियत संघ में संशोधनवादी सत्ता का विघटन हुआ तो उसे पूंजीवाद की महान विजय के बतौर पेश किया गया था। उस समय "इतिहास के अंत" की बात की जाने लगी थी। पूंजीवादी व्यवस्था को ही मानव सभ्यता की अंतिम और सर्वोच्च व्यवस्था घोषित किया जा रहा था। यह बात दीगर है कि जब यह घोषणा हो रही थी, उसी समय पूंजीवाद दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में कहर ढा रहा था। अमरीकी साम्राज्यवादी अपना विश्व प्रभुत्व स्थापित करने के लिए पूर्वी यूरोप के देशों से लेकर इराक, अफगानिस्तान और दुनिया के अन्य हिस्सों में कहर बरपा कर रहे थे तथा मानव सभ्यता को पैरों तले कुचल रहे थे। इतना करने के बाद भी साम्राज्यवाद अपने संकट से छुटकारा नहीं पा सका। विश्व पूंजीवादी अर्थव्यवस्था का संकट और गहराने लगा। जगह-जगह इसके विरुद्ध लोग खड़े होने लगे। पूंजीवादी व्यवस्था की इनकी मानव प्रकृति के अनुकूल होने के दावे एक बार फिर खोखले सिद्ध हो गये और दुनिया भर में फिर से समाजवाद और कम्युनिज्म की बातें प्रचारित होने लगीं।

जब रूस में महान अक्टूबर समाजवादी क्रांति हुई तो दुनिया भर के पूंजीपति वर्ग ने इसे स्वाभाविक तौर पर अपने लिए मौत की दस्तक के तौर पर समझा था और वे मजदूर वर्ग के पहले राज्य को खतम करने के लिए पहले ही दिन से हर तरह की कोशिश और साजिश करने में लग गये थे।

उनकी इस कोशिश और साजिश में उस समय मजदूर आंदोलन के गद्दार भी शामिल थे। द्वितीय इंटरनेशनल ने भी महान अक्टूबर समाजवादी क्रांति का विरोधकिया था। कार्ल काउत्स्की ने इसे क्रांति ही नहीं माना। वह इसे लेनिन के नेतृत्व में बोल्शेविकों द्वारा षड्यंत्र के जरिये सत्ता पर कब्जा करने की कार्रवाई बताता था। कार्ल काउत्स्की और उसके जैसे लोग प्रथम विश्व युद्ध के दौरान ही मार्क्सवाद से गद्दारी करके अपने देश के साम्राज्यवादी पूंजीपति वर्ग के साथ खड़े हो गये थे।

कार्ल काउत्स्की का महान अक्टूबर समाजवादी क्रांति का विरोध करने का प्रमुख तर्क यह था कि रूस एक पिछड़ा हुआ देश है, जहां मजदूर वर्ग की आबादी बहुत कम है। यह अभी पूंजीवादी विकास की उस अवस्था में नहीं है कि वहां पर समाजवाद लाया जा सके। उसके अनुसार, रूस को अभी पूंजीवादी विकास की अवस्था से लम्बे समय तक गुजरना होगा। जब विकास की वह अवस्था आ जायेगी और मजदूर वर्ग इतना प्रशिक्षित और सुसंस्कृत हो जायेगा, जब वहां समाजवाद के लिए भौतिक परिस्थिति तैयार हो जायेंगी, तभी वहां समाजवादी क्रांति होगी। काउत्स्की का कहना था कि प्रथम विश्व युद्ध के कारण जर्जर हो चुकी पुरानी जारशाही व्यवस्था विखंडित हो गयी थी। इसी के चलते लेनिन के नेतृत्व में बोल्शेविकों ने षड्यंत्रकारी तरीके से सत्ता पर कब्जा कर लिया था। काउत्स्की के अनुसार, लेनिन ने ऐसी षड्यंत्रकारी पार्टी बनायी थी जो सुगठित थी और सैनिक तौर तरीकों को अंजाम दे सकती थी। लेकिन वह आधुनिक राज्य को संचालित करने में बिलकुल अक्षम थी। इसलिए वह समाजवाद का निर्माण नहीं कर सकती थी। काउत्स्की का कहना था कि ऐसी पार्टी एशियाई किस्म के निरंकुशतावाद को भी जन्म दे सकती थी।

काउत्स्की का यह भी तर्क था कि बोल्शेविक यूरोपीय क्रांतियों के सफल होने पर अपने देश में समाजवाद के निर्माण की सारी आशायें केन्द्रित किये हुए थे, लेकिन जब ऐसा नहीं हुआ तो वे और ज्यादा निरंकुश तौर-तरीकों की ओर गये। काउत्स्की ने सोवियत समाज को कभी भी समाजवादी समाज नहीं माना। जब सोवियत संघ में भारी औद्योगीकरण हो गया, जब कृषि का सामूहिकीकरण हो गया तब भी वह सोवियत संघ के राज्य को तानाशाही द्वारा संचालित राज्य ही कहता था। काउत्स्की के अनुसार, पूंजीवाद से समाजवाद सिर्फ जनवाद के जरिये ही लाया जा सकता है काउत्स्की का यहां तक कहना था कि जनवाद, समाजवाद लाने के लिए मात्र साधन नहीं है बल्कि यह समाजवाद के साथ अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है।

काउत्स्की के अनुसार, लेनिन और स्तालिन काल में रूस (और बाद में सावियत संघ) कभी समाजवाद की ओर नहीं गया बल्कि वह समाजवाद से और दूर होता गया। काउत्स्की की नजर में सोवियत राज्य, विकसित पूंजीवादी देशों की तुलना में ज्यादा प्रतिक्रियावादी

राज्य था। वह सोवियत व्यवस्था को पूंजीवाद से भी ज्यादा बुरी व्यवस्था मानता था। काउत्स्की सोवियत व्यवस्था को खतम करके "जनवाद" लाने की हिमायत करता था।

काउत्स्की प्रथम विश्व युद्ध शुरू हो जाने के बाद ही क्रांति का, पूंजीवादी राज्य मशीनरी को चकनाचूर करके सर्वहारा वर्ग द्वारा अपनी राज्य मशीनरी बनाने का, सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व स्थापित करने का विरोधी हो गया था। वह संसदीय जड़वामनवाद से इतना अधिक ग्रस्त था कि उसने मार्क्सवाद की क्रांतिकारी शिक्षाओं में तोड़-मरोड़ किया और पूंजीवादी जनवाद को जनवाद के बतौर इस तरह चित्रित किया मानो वह पूंजीपति वर्ग का आम मजदूर-मेहनतकश आबादी पर अधिनायकत्व नहीं हो। इसी प्रकार सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व को वह पूंजीपति वर्ग के ऊपर तानाशाही न कहकर महज तानाशाही कह रहा था।

लेनिन ने काउत्स्की की मार्क्सवाद के साथ इस गद्दारी का विश्लेषण "समाजवाद और युद्ध" में, "द्वितीय इंटरनेशनल का पतन" में, "साम्राज्यवाद पूंजीवाद की चरम अवस्था" में, "राज्य और क्रांति" में तथा "सर्वहारा क्रांति और गद्दार काउत्स्की" में सर्वांगीण तरीके से किया है।

इन विश्लेषणों के आधार पर लेनिन ने द्वितीय इंटरनेशनल के काउत्स्की जैसे नेताओं के अवसरवाद व अंधराष्ट्रवाद की जड़ें साम्राज्यवादी लूट के एक हिस्से के बतौर मजदूर आंदोलन के इन नेताओं को मिले टुकड़ों में भी बतायी थीं। लेनिन के अनुसार, मजदूर आंदोलन में मौजूद अवसरवाद और सामाजिक अंधराष्ट्रवाद कोई आकस्मिक या छिटपुट परिघटना नहीं बल्कि विश्वव्यापी परिघटना है। मजदूर आंदोलन में द्वितीय इंटरनेशनल के नेताओं के अवसरवाद को बिना परास्त किये क्रांति को आगे नहीं बढ़ाया जा सकता था। सामाजिक जनवादी गद्दार मजदूर आंदोलन में पूंजीपति वर्ग के, पूंजीवाद के सामाजिक आधार हैं, ये उनके गुर्गे हैं। मजदूर आंदोलन में इन गुर्गों का पर्दाफाश करके, इनसे सम्बन्ध विच्छेद करके ही अक्टूबर क्रांति सम्पन्न हो सकी और समाजवाद का निर्माण किया जा सका था।

इसलिए जब ख्रुश्चोवी संशोधनवादी गुट ने पूंजीवादी पुनर्स्थापना कर दी तो द्वितीय इंटरनेशनल के उत्तराधिकारी सोशलिस्ट इंटरनेशनल के नेताओं ने कहा कि सोवियत समाज व्यवस्था की यही नियति थी। उनके अनुसार, समाज में उत्पादक शक्तियों के निम्न विकास की अवस्था में मनमाने तरीके से समाजवाद का निर्माण नहीं किया जा सकता था। लेनिन और स्तालिन के नेतृत्व में जो समाज स्थापित हुआ था वह समाजवादी समाज नहीं था।

II

सोवियत संघ में समाजवादी समाज को समाजवादी समाज न मानने वाला, उसे विकृत या पतित मजदूर राज्य कहने वाला त्रात्स्की था। वह 1903 से लेकर 1917 तक बोल्शेविकों का विरोधी था 1917 के मध्य में वह बोल्शेविक पार्टी में शामिल हुआ था। त्रात्स्की ने महान अक्टूबर समाजवादी क्रांति में हिस्सा लिया था।

त्रात्स्की का मानना था कि एक देश में समाजवाद नहीं आ सकता। उसके अनुसार रूस में समाजवादी क्रांति उस समय तक टिक नहीं सकती जब तक पश्चिम यूरोप के विकसित पूंजीवादी देशों में समाजवादी क्रांतियां नहीं हो जातीं। लेकिन जब ऐसा नहीं हुआ, तब एक देश में, सोवियत रूस में समाजवाद की ओर आगे बढ़ने का सवाल उपस्थित हुआ। त्रात्स्की का कहना था कि एक देश में समाजवाद नहीं आ सकता था। उसने इसे मजदूर वर्ग के राज्य की संज्ञा दी। लेकिन जब बोल्शेविक पार्टी ने युद्ध कम्युनिज्म, नयी आर्थिक नीति में पीछे हटने की नीति के बाद फिर से समाजवाद की ओर आगे बढ़ने के कदम उठाने शुरू किये और 1930 के दशक तक जब समाजवाद का निर्माण हो गया तब इसे उसने नौकरशाही द्वारा संचालित मजदूर राज्य कहना शुरू कर किया। उसके अनुसार इस पर नौकरशाही जाति शासन कर रही है। उसके अनुसार :

> "सोवियत निजाम को संक्रमणकालीन या मध्यवर्ती परिभाषित करना पूंजीवाद (और इसके साथ राजकीय पूंजीवाद) और समाजवाद जैसे पूर्ण सामाजिक प्रवर्गों का परित्याग कर देना है। अपने आप में पूर्णतया अपर्याप्त होने के साथ यह इस गलत विचार को जन्म दे सकता है कि वर्तमान सोवियत निजाम से केवल समाजवाद की ओर संक्रमण सम्भव है। यथार्थ में पूंजीवाद की ओर पश्चगति भी पूर्णतः संभव है। एक ज्यादा पूर्ण परिभाषा निश्चित तौर पर जटिल और विस्तारित होगी।
>
> "सोवियत संघ पूंजीवाद और समाजवाद के बीच खड़ा एक अंतर्विरोधी समाज है जिसमें : (क) उत्पादक शक्तियां राजकीय सम्पत्ति को समाजवादी चरित्र प्रदान करने की दृष्टि से भी अपर्याप्त हैं, (ख) वंचना के कारण पैदा हुई आदिम संचय की प्रवृत्ति योजनाबद्ध अर्थव्यवस्था के असंख्य छिद्रों से फूटती रहती है; (ग) बुर्जुआ चरित्र के वितरण के नियम समाज के नये विभेदीकरण के आधार बनते हैं; (घ) आर्थिक विकास मेहनतकशों के जीवन को धीमे-धीमे बेहतर बनाने के बावजूद एक विशेषाधिकार प्राप्त संस्तर के तेजी से पैदा होने को प्रोत्साहित करता है; (च) सामाजिक अंतर्विरोधों का फायदा उठाते हुए नौकरशाही ने अपने को एक अनियंत्रित जाति में बदल लिया है जो समाजवाद के लिए परायी है; (छ) शासक पार्टी द्वारा त्याग दी गयी सामाजिक क्रांति अभी भी सम्पत्ति सम्बन्धों और मेहनतकश जनता की चेतना में विद्यमान है; (ज) संचित होते हुए अंतर्विरोधों

का आगे का विकास इसे समाजवाद या पूंजीवाद की ओर ले जा सकता है; (झ) पूंजीवाद की ओर जाने में प्रतिक्रांति को मजदूरों के प्रतिरोध को तोड़ना होगा; (ट) समाजवाद की ओर जाने के लिए मजदूरों को नौकरशाही को उखाड़ फेंकना होगा। अंतिम विश्लेषण में प्रश्न का निर्णय राष्ट्रीय और वैश्विक दोनों स्तर पर जीवित सामाजिक शक्तियों के संघर्ष से होगा।" **(Trotsky: Revolution Betrayed, chapter-9, Page-12** अनुवाद हमारा**)**

त्रात्स्की के अनुसार, सोवियत समाज न तो पूंजीवादी समाज था और न ही यह समाजवादी समाज था। उसने कहा कि यह दोनों के बीच अवस्थित समाज था जो पूंजीवाद की ओर भी जा सकता था और समाजवाद की ओर भी। इससे यह भी अर्थ निकलता है कि वह समाजवाद को एक पूर्ण आर्थिक-सामाजिक संरचना मानता था।

तब फिर पूंजीवाद और समाजवाद के बीच खड़े इस समाज में शासक वर्ग कौन है? त्रात्स्की इसका जवाब यूं देता है :

"सोवियत नौकरशाही को 'राजकीय पूंजीवाद' के एक वर्ग के बतौर चित्रित करने का प्रयास आलोचना के सामने ठहर नहीं पायेगा। नौकरशाही के पास न तो शेयर हैं और न बाण्ड। उसे अपने किसी विशिष्ट सम्पत्ति सम्बन्धों से स्वतंत्र प्रशासनिक श्रेणी क्रम में भर्ती किया जाता है, प्रतिपूरित किया जाता है और नवीनीकृत किया जाता है। कोई व्यक्तिगत नौकरशाह राज्य मशीनरी में अपने शोषण के अधिकारों को अपने उत्तराधिकारियों के पास स्थानांतरित नहीं कर सकता है। नौकरशाही अपने विशेषाधिकारों का सत्ता के दुरुपयोग के रूप में ही इस्तेमाल कर पाती है। यह अपनी आय छिपाती है। यह बहाना करती है कि एक विशिष्ट सामाजिक समूह के तौर पर यह अस्तित्वमान नहीं है। राष्ट्रीय आय के एक बड़े हिस्से का इसके द्वारा हस्तगतकरण सामाजिक परजीविता के चरित्र का है। यह सारा कुछ सोवियत शासक संस्तर की स्थिति को अत्यधिक अंतर्विरोधी, कई मुहों वाली और गरिमाहीन बना देती है इसके बावजूद कि इसकी सत्ता पूर्ण है और चाटुकारिता का धुंआ इसे छिपाता है।

(वही**, Chapter-9, Pqge-9)**

त्रात्स्की के अनुसार, अर्थव्यवस्था का चरित्र राजनीतिक सत्ता के चरित्र पर निर्भर करता है। लेकिन सोवियत संघ में राजनीतिक सत्ता नौकरशाही के हाथों में है जो खुद एक सुविधा प्राप्त संस्तर तो है लेकिन कोई वर्ग नहीं है और न ही किसी वर्ग का हिस्सा है। यह नौकरशाही सर्वहारा के हाथों में हथियार की तरह भी काम करती है क्योंकि यह अपने हित में उत्पादन का राज्य के हाथों में संकेन्द्रण करती है जो प्रगतिशील कदम हैं। इस तरह त्रात्स्की के हिसाब से सोवियत संघ एक विशेष अंतर्विरोधपूर्ण स्थिति में खड़ा हुआ है। त्रात्स्की यह भी कहता है कि क्रांति को उखाड़ फेंका नहीं गया है क्योंकि तब पूंजीपति वर्ग सत्ता में आ गया होता। यहां तो निजी पूंजी को बढ़ावा देने के बदले उसका राजकीयकरण/सामूहिकीकरण किया जा रहा है। इस तरह क्रांति को उखाड़ फेंका नहीं गया है, उसके साथ केवल गद्दारी की गयी है। यह गद्दारी किसने की? यह गद्दारी स्तालिन के नेतृत्व में नौकरशाही ने की है।

सोवियत संघ में नौकरशाही की विजय के लिए वह बार-बार थर्मिडोर का जिक्र करता है। महान फ्रांसीसी क्रांति के दौरान नवें थर्मिडोर के दिन राब्सपियरे को मार डाला गया और उसको गिलोटिन पर चढ़ा दिया गया। यह फ्रांसीसी क्रांति में प्रतिक्रियावाद की विजय का प्रतीक है। इसके बाद गरीब शहरी लोगों से पूंजीपति वर्ग ने सत्ता छीन ली। थर्मिडोर का इस्तेमाल कर त्रात्स्की ने यह दिखाने का प्रयास किया कि सोवियत संघ में भी स्तालिन के नेतृत्व में नौकरशाही ने मजदूर वर्ग के हाथ से सत्ता छीन ली और वह मजदूर वर्ग के नौकर के बदले उसका मालिक बन बैठी। त्रात्स्की के अनुसार, सोवियत संघ में विरोध पक्ष (त्रात्स्की-जिनोवियेव -कामेनेव इत्यादि) की हार का कारण यही था कि क्रांति के बाद नौकरशाही क्रमशः हावी होती चली गयी। इसके हावी होने के पीछे रूस में विश्व युद्ध और गृहयुद्ध की तबाही से पैदा हुयी थकान, मजदूर वर्ग की उदासीनता तथा पार्टी तंत्र पर स्तालिन जैसे लोगों की पकड़ जैसे कारक जिम्मेदार थे।

इसके साथ ही त्रात्स्की यह भी कहता है कि क्रांतिकारी राज्य में नौकरशाही की बीमारी अनिवार्य है। यह खुद सर्वहारा की तानाशाही और राज्य से ही पैदा होती है। उसके अनुसार लेनिन भी उसका समाधान नहीं खोज पाये थे। सर्वहारा की तानाशाही की एक और खामी का जिक्र करते हुए त्रात्स्की कहता है कि यह रचनाशीलता के लिए बाधक है। केवल सर्वहारा की तानाशाही समाप्त हो जाने पर ही रचनाशीलता के लिए सम्भावना पैदा होती है।

इस सबके बावजूद त्रात्स्की सोवियत संघ में मुख्य अंतर्विरोध के बारे में बात करता है। वह कहता है कि सोवियत संघ में इस समय मुख्य अंतर्विरोध सम्पत्ति के समाजवादी रूप और कमजोर उत्पादक शक्तियों के बीच है। वह कहता है :

"... ... ... लेकिन एक पिछड़े देश में सम्पत्ति के समाजवादी रूपों की स्थापना तकनीक और संस्कृति के अपर्याप्त स्तर से टकराने लगी। उच्च वैश्विक उत्पादक शक्तियों और सम्पत्ति के पूंजीवादी रूप के बीच के अंतर्विरोध से खुद पैदा होने वाली अक्टूबर क्रांति ने अपनी बारी में निम्न राष्ट्रीय उत्पादक शक्तियों और सम्पत्ति के समाजवादी रूप के बीच के अंतर्विरोध को जन्म दिया।"

(वही**, Appendix, page 6,** अनुवाद हमारा **)**

इस स्थिति में क्या किया जाय? जबकि अक्टूबर क्रांति उखाड़ न फेंकी गयी हो, बल्कि उसके साथ गद्दारी की गयी हो, जबकि नौकरशाही सत्ताशीन हो जो कि एक वर्ग नहीं केवल आबादी का एक संस्तर है, जबकि समाजवादी सम्पत्ति रूप देश में प्रधान हो तथा मुख्य अंतर्विरोध समाजवादी सम्पत्ति रूपों तथा राष्ट्रीय पैमाने पर कमजोर उत्पादक शक्तियों के बीच हो, तब क्या किया जाय? इसके लिए त्रात्स्की एक राजनीतिक क्रांति की, अक्टूबर क्रांति के पूरक की बात करता है। वह लिखता है :

"वह क्रांति जिसे नौकरशाही अपने खिलाफ तैयार कर रही है 1917 की अक्टूबर क्रांति की तरह सामाजिक नहीं होगी, इस समय सवाल समाज के आर्थिक आधार को बदलने का, सम्पत्ति के एक रूप को दूसरे से बदलने का नहीं है। इतिहास ने अन्य जगहों पर न केवल सामाजिक क्रांतियां देखी हैं जिन्होंने सामंती निजाम के बदले बुर्जुआ निजाम की स्थापना कर दी, बल्कि ऐसी राजनीतिक क्रांतियां भी देखी हैं जिन्होंने समाज के आर्थिक आधारों को नष्ट किये बिना पुराने सत्ता धारी ऊपरी संस्तरों को उखाड़ फेंका (फ्रांस में 1830 व 1848, रूस में फरवरी, 1917, इत्यादि)। बोनापार्तवादी जाति को उखाड़ फेंकने के स्वाभवतः ही गहरे सामाजिक परिणाम होंगे लेकिन अपने आप में यह-राजनीतिक क्रांति तक सीमित होगी।

"इतिहास में यह पहली बार हुआ है कि मजदूरों की क्रांति से पैदा हुआ कोई राज्य अस्तित्वमान है। जिन चरणों से यह गुजरेगा वह कहीं लिखा हुआ नहीं है। यह सच है कि सोवियत संघ के सिद्धान्तकारों और रचनाकारों ने आशा की थी कि एक पूर्णतया पारदर्शी और लचीली व्यवस्था समाज के आर्थिक और सांस्कृतिक विकास के अनुरूप राज्य को शांतिपूर्वक अपने को रूपांतरित करने, विकसित करने और मर जाने का रास्ता देगी। लेकिन यहां फिर जीवन उससे ज्यादा जटिल निकला जितना सिद्धान्त ने पूर्वानुमान किया था। एक पिछड़े देश के सर्वहारा को सबसे पहली समाजवादी क्रांति करने का नसीब प्राप्त हुआ। इस ऐतिहासिक विशेषाधिकार के लिए, सारे संकेत इसी ओर हैं, उसे एक पूरक क्रांति से कीमत चुकानी होगी-इस बार नौकरशाही के निरंकुश शासन के खिलाफ। नयी क्रांति का कार्यक्रम बहुत कुछ इस पर निर्भर करेगा कि वह कब फूटती है, उस देश का स्तर क्या है तथा काफी मात्रा में अंतर्राष्ट्रीय स्थिति पर ... ..." (वही, chapter 11, Page-9 अनुवाद हमारा)

इसके बाद त्रात्स्की इस पूरक क्रांति के कार्यक्रम के बारे में बात करता है:

" सोवियत संघ के चरित्र को बेहतर ढंग से समझने के लिए आइये हम इसके भविष्य के बारे में दो भिन्न कल्पनायें करें। पहले हम यह कल्पना करें कि सोवियत नौकरशाही को ऐसी क्रांतिकारी पार्टी द्वारा उखाड़ फेंका जाता है जिसके पास पुराने बोल्शेविज्म के सारे गुण हों और जो साथ ही हाल के वैश्विक अनुभव से समृद्ध हो। ऐसी पार्टी ट्रेड यूनियनों और सोवियतों में जनवाद की पुनर्स्थापना करने में सक्षम होगी और उसे करेगी। जनता के साथ तथा उसके शीर्ष पर यह राज्य मशीनरी की निर्मम सफाई करेगी। यह स्तरों और विभूषणों को समाप्त कर देगी, सभी प्रकार के विशेषाधिकारों को समाप्त कर देगी और श्रम के भुगतान में गैर-बराबरी को अर्थव्यवस्था व राज्य मशीनरी के जीवन की आवश्यकताओं तक सीमित कर देगी। यह नवयुवकों को स्वतंत्र रूप से सोचने, सीखने, आलोचना करने और बड़े होने का स्वतंत्र अवसर प्रदान करेगी। यह मजदूर और किसान जनता की इच्छानुसार राष्ट्रीय आय के वितरण में भारी परिवर्तन करेगी। लेकिन जहां तक सम्पत्ति सम्बन्धों का मामला है, नयी सत्ता को क्रांतिकारी कदमों की जरूरत नहीं होगी। यह योजनाबद्ध अर्थव्यवस्था के प्रयोग को बनाये रखेगी और आगे बढ़ायेगी। राजनीतिक क्रांति के बाद-यानी नौकरशाही को सत्ताच्युत करने के बाद-सर्वहारा को अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण सुधारों की श्रंखला लागू करनी होगी पर एक अन्य क्रांति नहीं।"

(वही, Chapter-9, Page-12 अनुवाद हमारा)

"यह एक शासक गुट को दूसरे से प्रतिस्थापित करने का मामला नहीं है बल्कि देश की अर्थव्यवस्था को चलाने तथा संस्कृति को निर्देशित करने के तरीके को बदलने का सवाल है। नौकरशाही एकतंत्रवाद को सोवियत जनवाद के लिए जगह खाली करनी होगी। आलोचना के अधिकार तथा चुनाव की वास्तविक स्वतंत्रता की पुनर्स्थापना देश के आगे के विकास के लिए जरूरी शर्त है। यह सोवियत पार्टियों की स्वतंत्रता, बोल्शेविक पार्टी से शुरू करके ट्रेड यूनियनों को भी पुनर्जीवित करने की पूर्व कल्पना करता है। उद्योग में जनवाद की बहाली का मतलब मेहनतकशों के हित में योजनाओं का भारी संशोधन होगा। आर्थिक समस्याओं पर स्वतंत्र बहस-मुबाहसा नौकरशाही की गलतियों और आगे-पीछे के भारी खर्चे को कम कर देगा। सोवियतों के महंगे खेल महल, नये थियेटर तथा दिखावटी भूमिगत मार्गों को मजदूरों के घरों की खातिर बंद कर दिया जायेगा। 'वितरण का बुर्जुआ नियम' एकदम जरूरत तक सीमित कर दिया जायेगा तथा सामाजिक धन के बढ़ने के साथ समाजवादी बराबरी को जगह दे देगा। स्तर तुरंत खत्म कर दिये जायेंगे। विभूषण पदक भट्टी में झोंक दिये जायेंगे। नवयुवक को मौका मिलेगा कि वह स्वतंत्रतापूर्वक सांस ले, आलोचना करे, गलतियां करे और बड़ा हो। विज्ञान और कला को बेड़ियों से मुक्त कर दिया जायेगा और अंततः विदेश नीति क्रांतिकारी अंतर्राष्ट्रवाद की परम्परा पर लौट आयेगी।"

(वही,Chapter-9, Page-12, अनुवाद हमारा)

त्रात्स्की ने जिस चौथे इंटरनेशनल की स्थापना की थी, उसके ऐतिहासिक मिशन के बतौर यह पूरक क्रांति विश्व क्रांति के द्वारा ही सम्पन्न होगी। त्रात्स्की कहता है :

"यदि सुधारवादियों और कम्युनिस्ट नेताओं के संयुक्त तोड़-फोड़ के बावजूद पश्चिमी यूरोप का सर्वहारा सत्ता में आ जाता है तो सोवियत संघ के इतिहास में एक नया अध्याय शुरू होगा। यूरोप में क्रांति की पहली विजय सोवियत जनता में बिजली के झटके की तरह गुजरेगी, उसे खड़ा करेगी, उसकी स्वतंत्रता की भावना को ऊपर उठायेगी, 1905 और 1917 की परम्पराओं को जगायेगी, बोनापार्तवादी नौकरशाही की स्थिति को कमजोर करेगी और चौथे इंटरनेशनल के लिए उससे कम महत्व नहीं ग्रहण करेगी जितनी अक्टूबर क्रांति ने तीसरे इंटरनेशनल के लिए की। केवल इसी रूप में समाजवादी भविष्य के लिए सर्वहरा राज्य को बचाया जा सकता है। "

(वही, Chapter-9, Page-12 अनुवाद हमारा)

यह है सोवियत संघ की समस्याओं का त्रात्स्की द्वारा प्रस्तुत विश्लेषण और उसका समाधान ।

केवल ऊपरी तौर पर किया जाने वाला अवलोकन यह दिखा देता है कि समाजवादी समस्याओं का त्रात्स्की द्वारा प्रस्तुत विश्लेषण और समाधान माओ के सिद्धान्तों से, महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के सिद्धान्तों से एकदम भिन्न है। यह सही है कि त्रात्स्की 1930 के दशक के सोवियत संघ को समाजवादी देश नहीं मानता। लेकिन इसके संदर्भ में वह समाजवादी समाजों के बारे में जितनी बातें करता है, वे माओ की बातों से बिल्कुल भिन्न हैं बल्कि बिलकुल विरोधी हैं।

सबसे महत्वपूर्ण बात तो यह है कि उसने सोवियत संघ में मुख्य अंतर्विरोध सम्पत्ति के समाजवादी रूपों तथा कमजोर राष्ट्रीय उत्पादक शक्तियों के बीच माना। यह माओ की विरोधी बात है और ल्यू शाओ ची तथा देंङ श्याओ पिंङ से मिलती है। माओ का कहना था कि समाजवाद स्थापित हो जाने के बाद समाज का मुख्य अंतर्विरोध यह है कि हमारी अधिरचना आधार के अनुरूप नहीं है। अधिरचना का लगातार क्रांतिकारीकरण उत्पादन सम्बन्धों के लगातार विकास का रास्ता खोलेगा। और उत्पादन सम्बन्धों में लगातार विकास उत्पादक शक्तियों के विकास को गति प्रदान करेगा। उत्पादक शक्तियों और उत्पादन सम्बन्धों के बीच अंतर्विरोध में जरूरी यह है कि उत्पादन सम्बन्धों को और उन्नत किया जाय। केवल इसी तरह से उत्पादक शक्तियां विकसित होंगी। इसके विपरीत, ल्यू शाओ ची का कहना था कि उत्पादन सम्बन्ध उन्नत हो गये हैं, (समाजवाद कायम हो जाने के बाद) और अब जरूरत इस बात की है कि उत्पाादक शक्तियों को उन्नत करने पर जोर दिया जाय। जहां तक चेतना उन्नत करने की बात है, उसके लिए आलोचना-आत्मालोचना, समाजवादी शिक्षा इत्यादि के पार्टी कार्यक्रम पर्याप्त है।

सोवियत संघ में ख्रुश्चोव के जमाने में पूंजीवादी पुनर्स्थापना होने के बाद माओ ने समाजवादी समाज की समस्याओं का जो विश्लेषण किया उसकी मुख्य बात थी कि समाजवादी समाज स्थापित हो जाने के बाद भी समाज में मालों का चलन कायम रहता है, मूल्य का नियम काम करता रहता है, काम के अनुसार उपभोग का बुर्जुआ अधिकार मौजूद रहता है, शहर और देहात, मजदूर और किसान तथा शारीरिक श्रम और मानसिक श्रम के बीच भेद बना रहता है (यह उत्पादन के साधनों के पूर्ण राजकीयकरण के बाद की बात है । सामूहिक फार्मों के बने रहने के कारण सोवियत संघ यहां तक भी नहीं पहुंचा था)। यह वह आर्थिक जमीन है जहां से बुर्जुआ तत्व लगातार पैदा होते रहते हैं। दूसरी ओर पुराने समाज से विरासत में प्राप्त वर्गीय समाज के विचार भी पीढ़ी दर पीढ़ी लम्बे समय तक कायम रहते हैं। इन सबके कारण बुर्जुआ तत्वों के पैदा होने की जमीन समाज में बनी रहती है और ये तत्व पार्टी और राज्य के कारकूनों पर असर डालते रहते हैं। यदि इन तत्वों के खिलाफ लगातार संघर्ष कर इनको समाप्त नहीं किया जाता, इनको पैदा करने वाली आर्थिक-भौतिक जमीन को लगातार सीमित नहीं किया जाता है तो इस बात की संभावना बनी रहती है कि ये तत्व पार्टी व राज्य में हावी हो जायें, इसकी दिशा बदल दें और पूंजीवाद लागू हो जाय।

इन सबसे बचने का एक ही तरीका है-महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति। पूरी अधिरचना का लगातार क्रांतिकरण किया जाय। पुराने विचारों के खिलाफ, शोषक वर्गीय विचारों के खिलाफ जंग छेड़ी जाय जो पार्टी व राज्य कर्ताधर्ता पूजीवादी विचारों पर चल रहे हैं, उन्हें पदों से हटा दिया जाय। उत्पादन सम्बन्धों में लगातार परिवर्तन कर उसे कम्युनिज्म की ओर बढ़ाया जाय। और यह सब करने के लिए सर्वहारा वर्ग की तानाशाही को मजबूत किया जाय।

लेकिन यह सब पार्टी के निर्देशन मात्र से, ऊपर से नहीं किया जा सकता। पार्टी के ऊपर के ही तो ढेर सारे लोगों से संघर्ष है-पार्टी और राज्य में बैठे पूंजीवादी पथगामी लोगों से। यह तभी हो सकता है जब पार्टी की नेतृत्वकारी भूमिका के साथ आम मजदूर जंन इस सब की बागडोर अपने हाथ में लें। वे न केवल पूंजीवादी पथगामियों को सत्ताच्युत करें अपितु प्रशासन और उत्पादन-प्रबन्धन का कार्य भी अपने हाथ में लें। पार्टी और राज्य नौकरशाही के खिलाफ जंग इस सबका हिस्सा है। कम्युनिज्म तक पहुंचने के लिए इस तरह की कई सांस्कृतिक क्रांतियों की आवश्यकता होगी। केवल कई पीढ़ियों बाद ही और कई सांस्कृतिक क्रांतियों से गुजर कर समाजवादी समाज कम्युनिज्म में रूपान्तरित होगा।

माओ की इस अवधारणा में यह कहीं नहीं है कि समाजवादी समाज में नौकरशाही की बीमारी लाईलाज है, कि सर्वहारा की तानाशाही में ही ऐसा कुछ है कि वह राज्य के जनता से अलगाव और नौकरशाही को जन्म देगा। इस संभावना को समाप्त किया जा सकता है। यह कहना कि काम के अनुसार उपभोग के नियम का पालन करके वस्तुतः सर्वहारा राज्य जो कि बहुसंख्या का है, बहुसंख्या के खिलाफ अल्पसंख्या के विशेषाधिकारों की रक्षा करता है और यह अजीब दोष है, सर्वहारा तानाशाही के वास्तविक चरित्र को नजरअंदाज करना है। सर्वहारा तानाशाही है ही इसलिए कि तकनीकी कर्मचारियों को ज्यादा वेतन व सुविधायें देते हुए भी उन्हें पूर्णतया अपने नियंत्रण में रखें, बुर्जुआ वर्ग पर नियंत्रण की तो बात दूर की है। यह सुविधा प्राप्त अल्पसंख्यक सर्वहारा तानाशाही से परे नहीं हैं। सर्वहारा तानाशाही को त्रात्स्की ने कितना कम समझा है वह इससे दिखता है कि वह इसे रचनाशीलता के लिए घातक समझता है। यह सर्वहारा तानाशाही की विशुद्ध निम्न-बुर्जुआ अवधारणा है। यह लेनिन की अवधारणा के बिलकुल खिलाफ है। लेनिन के अनुसार, सर्वहारा तानाशाही बहुसंख्यक मजदूर-किसान जनता को जनवाद प्रदान करती है और इस तरह उनकी रचनाशीलता को मुक्त करती है। क्रमशः बढ़ती यह रचनाशीलता कम्युनिज्म में अपने चरम पर पहुंचेगी।

त्रात्स्की के विचार इससे ठीक उल्टे हैं। त्रात्स्की का इतना भर लक्ष्य है कि सोवियत पार्टी और राज्य पर त्रात्स्कीपंथियों का कब्जा हो जाये और फिर वे विश्व क्रांति के माध्यम से सारी समस्याओं को हल कर देंगे। इसलिए वह कई सांस्कृतिक क्रांतियों की नहीं बल्कि सत्ता पर कब्जा करने के लिए पूरक राजनीतिक क्रांति की बात करता है।

इस राजनीतिक क्रांति के बाद त्रात्स्की क्या करेगा? वह पार्टी और राज्य से नौकरशाही को बाहर कर देगा। लेकिन इसका क्या केवल इतना सा मतलब नहीं है कि वह अपने विरोधियों को बाहर कर देगा? फिर स्तालिन ने विरोधियों को, जो समाजवाद के निर्माण में बाधा बन रहे थे, बाहर कर कौन सी गलती कर दी? त्रात्स्की पार्टी के भीतर जनवाद, सोवियतों में जनवाद तथा ट्रेड यूनियनों में जनवाद बहाल करने की बात करता है। लेकिन केवल कम याददाश्त के लोग ही त्रात्स्की के इस भ्रमजाल के शिकार होंगे। यह त्रात्स्की ही था जिसने 1921 में ट्रेड यूनियनों के दायरे में सैनिक तौर-तरीके लागू करने का प्रयास किया था। उसी ने ट्रेड यूनियनों को ऊपर से झकझोरने की बात कही थी और उसके निर्णयों को लेनिन को रद्द करना पड़ा था। उसी ने ट्रेड यूनियनों को सरकारी तंत्र का हिस्सा बना देने की बात की कि सर्वहारा राज में ट्रेड यूनियनों की स्वतंत्रता की कोई आवश्यकता नहीं है। यह त्रात्स्की ही था जिसके बारे में लेनिन ने कहा था कि 'मसले के विशुद्ध प्रशासनिक पहलू के प्रति उनका अत्यधिक अनुराग है।' और यह आदमी जनवाद की इतनी बातें करता है।

पार्टी और सोवियतों में जनवाद बहाल करने का क्या मतलब है? इसका मतलब है कि पार्टी में गुटों को तथा समाज में अन्य पार्टियों को मान्यता देना। लेकिन इन दोनों को ही 'क्रोन्साद्त' घटनाओं के बाद दसवीं पार्टी कांग्रेस में प्रतिबंधित कर दिया गया था। इस निर्णय में तब त्रात्स्की की पूर्ण सहमति थी। अब त्रात्स्की कहने लगा कि वे समय विशेष के निर्णय थे उन्हें रद्द किया जाना चाहिए। लेकिन दसवीं कांग्रेस का निर्णय कहीं नहीं कहता कि यह विशिष्ट परिस्थितियों में आपातकालीन निर्णय है। और न ही यह कि समय के साथ इसे बदल दिया जायेगा। शोषक वर्गों के मताधिकार छीने जाने के समय लेनिन ने कहा था कि यह सर्वहारा तानाशाही का अनिवार्य तत्व नहीं है, यानी यह मताधिकार बाद में बहाल किया जा सकता है। लेकिन उपरोक्त मामले पर लेनिन ने दसवीं कांग्रेस में ऐसी कोई बात नहीं कही थी।

और फिर पार्टी में गुटबाजी तथा समाज में विभिन्न पार्टियों की मौजूदगी से किसे फायदा होगा? क्या इससे पार्टी मजबूत होगी? क्या इससे सर्वहारा की तानाशाही मजबूत होगी? त्रात्स्की कहता है कि सर्वहारा के कई संस्तर होने के चलते उसकी कई पार्टियां हो सकती हैं। तो फिर इन विभिन्न पार्टियों का लक्ष्य क्या होगा? बुर्जुआ वर्ग के विभिन्न हिस्सों में आपसी प्रतियोगिता होती है। क्या सर्वहारा के विभिन्न संस्तरों में भी ऐसी प्रतियोगिता है? और फिर सर्वहारा राज्य का उद्देश्य क्या है? इन संस्तरों के भेद को समाप्त करना या उन्हें बनाये रखना? यदि वे बने रहते है तो क्या बढ़ेंगे नही? क्या विभिन्न पार्टियां इन संस्तरों को बढ़ायेंगी नहीं? बुर्जुआ जनवाद की तर्ज पर सर्वहारा की कई पार्टियों की बात करना बुर्जुआ जनवाद के सामने निर्लज्ज समर्पण है।

इसी तरह पार्टी में जनवाद के लिए क्या गुटबाजी होना जरूरी है? क्या पार्टी के हर सदस्य को इजाजत नहीं होती है कि वह अपनी बात पूरी पार्टी के सामने रख सके। फिर गुटबाजी की जरूरत क्यों होगी? यदि जनवाद के लिए जो पार्टी ऐसी हो कि वह अपने सदस्यों को जनवाद न प्रदान करती हो तो वह गुटों को भी नहीं प्रदान करेगी। तब गुटों का मतलब जनवाद नहीं, एक पार्टी के भीतर कई पार्टी होना होगा। ऐसी स्थिति न तो सर्वहारा पार्टी के अनुशासन को कायम रख पायेगी (लौह अनुशासन की तो बात ही क्या) और न ही सर्वहारा तानाशाही को। यह वस्तुतः त्रात्स्की जैसे निम्न बुर्जुआओं के सुनहरे दिनों की वापसी की मांग है जब वे 1917 से पहले पार्टी अनुशासन से मुक्त, मुक्त विचरण करते थे और कुछ भी करने और कहने के लिए स्वतंत्र थे। लेकिन सर्वहारा की तानाशाही इस निम्न बुर्जुआ लोफरपने को बर्दाश्त नहीं कर सकती। दसवीं पार्टी कांग्रेस में लेनिन ने इसे साफ-साफ घोषित कर दिया था।

त्रात्स्की को जब अंतःपार्टी संघर्ष में बार-बार पराजित होना पड़ा और उसकी सोवियत पार्टी और राज्य में हावी हो जाने की उम्मीद खत्म हो गयी। जब सोवियत संघ के औद्योगिकीकरण व सामूहिकीकरण के सफल अभियान ने, जिसकी उसने 1929 तक कोई कल्पना नहीं की थी, उसे हताश ही नहीं बदहवास कर दिया। उसे लगने लगा कि स्तालिन और उसके समर्थकों को अब पराजित कर पाना तथा पार्टी व राज्य से हटा पाना असम्भव है। अब उसने सोवियत संघ और सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी के खिलाफ खुला युद्ध छेड़ दिया। त्रात्स्कीपंथियों द्वारा समूचे सोवियत संघ में तोड़-फोड़ की बाढ़ आ गयी। हत्याओं के प्रयास किये गये और कई सफल भी हुए। इन सबसे बढ़कर इन्होंने साम्राज्यवादियों के साथ संयुक्त मोर्चा कायम कर लिया और सोवियत राज्य के घोषित दुश्मन बन गये।

ऐसा नही है कि 1927 में पार्टी से निकाले जाने के पहले त्रात्स्की ने पार्टी और सोवियत राज्य विरोधी गतिविधियां नहीं की थी। लेकिन पार्टी से निकाले जाने और खासकर देश से निकाले जाने के बाद उसमें गुणात्मक फर्क आ गया। अब वह खुलेआम साम्राज्यवादियों के हाथों में खेलने लगा तथा किसी भी तरह सोवियत राज्य पर कब्जा करना उसका लक्ष्य बन गया। इस दिशा में एक ऊंची छलांग उसने चौथे इंटरनेशनल की स्थापना की घोषणा करके लगाई। प्रतिक्रांतिकारी तो वह पहले ही बन गया था, अब वह सोवियत राज्य के विरुद्ध अपराध करने में सारी सीमायें तोड़ने लगा। त्रात्स्की के पार्टी से निकाले जाने के बाद से, खासकर 1930 के दशक में त्रात्स्कीवाद मजदूर आंदोलन में एक प्रवृत्ति के बदले प्रतिक्रांतिकारी धारा बन गया जिसका उद्देश्य था साम्राज्यवादियों के साथ मिलकर सोवियत राज्य को नष्ट करना। सोवियत संघ में पूरक राजनीतिक क्रांति की बात करके उसने उसे केवल सैद्धान्तिक जामा पहनाया था। त्रात्स्की और साम्राज्यवाद दोनों ही अब सोवियत समाजवाद के मामले में एक ही जमीन पर खड़े थे- न केवल वस्तुगत तौर पर बल्कि आत्मगत तौर पर। 1905 में प्रस्तुत

'सतत् क्रांति' की गलत लाइन ने आगे बढ़ कर अब यह रूप ग्रहण कर लिया था, इसने त्रात्स्कीवाद को मजदूर आंदोलन में एक प्रवृत्ति से पहले मजदूर राज के घोषित दुश्मन की स्थिति में पहुंचा दिया था।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि त्रात्स्की ने सोवियत संघ को कभी भी समाजवादी देश नहीं माना। लेकिन जब ख्रुश्चोवी संशोधनवादी गुट द्वारा पूंजीवादी पुनर्स्थापना हुई, तब त्रात्स्कीवादियों ने कहा कि यह बात तो वे पहले से ही कहते रहे हैं उनके लिए यह कोई गुणात्मक परिवर्तन नहीं था। ख्रुश्चोवी संशोधनवादी गुट द्वारा की गयी पूंजीवाद की पुनर्स्थापना को वे स्तालिन काल के सोवियत संघ की निरंतरता में ही देखते हैं। वे दावा करते हैं कि सोवियत संघ में पूंजीवादी पुनर्स्थापना ने त्रात्स्की की भविष्यवाणी को सही सिद्ध कर दिया है। त्रात्स्की के सैद्धान्तिक दिवालियेपन को ऊपर बताया जा चुका है।

III

यह सर्वविदित है कि ख्रुश्चोव गुट द्वारा सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सत्ता पर दखल करने के बाद पूंजीवादी पुनर्स्थापना कर दी गयी थी। संशोधनवादी ख्रुश्चोव गुट ने सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की 20वीं कांग्रेस में प्रस्तुत संशोधनवादी कार्यदिशा का चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के साथ-साथ अल्बानिया की श्रम पार्टी ने विरोध किया था।

अल्बानिया की पार्टी द्वारा सोवियत संघ में पूंजीवादी पुनर्स्थापना के कारणों का जो विश्लेषण किया गया और उसको रोकने के जो उपाय सुझाये गये, वे चीन की कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा सुझाये गये रास्ते से सर्वथा भिन्न थे।

अनवर होजा लिखते हैं :

"यही सोवियत संघ में भी हुआ। लेनिन और स्तालिन की बोल्शेविक पार्टी, जिसने क्रांति व समाजवाद के निर्माण की महान विजय हासिल की थी, भीतर से ध्वस्त कर दी गयी। स्तालिन की सही अवस्थिति तथा बोल्शेविक पार्टी के राजनीतिक और विचारधारात्मक काम के बावजूद छिपे हुए संशोधनवादियों ने क्षणभर में सत्ता छीन ली और अपेक्षाकृत थोड़े समय में सोवियत संघ को एक समाजवादी देश से पूंजीवादी देश में बदल दिया और अब पूंजीवादी बुर्जुआ वर्ग के एक नये संस्तर को पैदा कर दिया है जो स्वयं को सैनिक ताकत और राज्य सुरक्षा सेवा पर आधारित करता है।"

(Enver Hoxha, Reflection on China, Vol- II, Page-758, अनुवाद हमारा)

अल्बानिया का आधिकारिक इतिहास यह कहता है :

"सोवियत संघ में पार्टी कार्यकर्ता मजदूर वर्ग के नेतृत्व और नियंत्रण से बाहर निकल गये, क्रांतिकारी भावना खो दी और बुर्जुआ बन गये, इन्होंने पार्टी और वर्ग पर अपना कानून थोप दिया और प्रतिक्रांति कर डाली। इससे अल्बानिया की श्रम पार्टी ने कार्यकर्ताओं के ऊपर पार्टी के नियंत्रण और निर्देशन तथा वर्ग के नियंत्रण और निर्देशन का महत्वपूर्ण सबक निकाला। अनवर होजा सिखाते हैं : कार्यकर्ता ... ... को प्रथमतः तो मजदूर वर्ग की पाठशाला में शिक्षित किया जाना चाहिए यदि वह वर्ग की पाठशाला से नहीं गुजरा है तो वह कियी लायक नहीं है। यदि वह वर्ग की शिक्षा और भावना से लैस नहीं हुआ है तो अवसर मिलने पर देर सबेर वह पार्टी और जनता पर सवारी गांठने लगता है।" **(History of Party of Labour of Albania, पृष्ठ 523-524, अनुवाद हमारा)**

"जैसा कि कामरेड अनवर होजा अपनी रचनाओं में बताते हैं, ख्रुश्चोवी संशोधनवादियों ने सोवियत संघ में सत्ता हड़प ली और विश्व पूंजीवाद की इस संघर्ष में बहुत बड़ी सेवा की।"

"इसके लिए ख्रुश्चोव गुट लम्बे समय से चुपके-चुपके काम कर रहा था लेकिन स्तालिन की मृत्यु के बाद ही इसने बोल्शेविक पार्टी के मार्क्सवादी-लेनिनवादी रास्ते के खिलाफ पूरी ताकत के साथ काम किया, उस बोल्शेविक पार्टी के जिसने अक्टूबर क्रांति और समाजवादी निर्माण की विजय हासिल की थी। इसने इसे एक नये संशोधनवादी, प्रतिक्रांतिकारी, सामाजिक साम्राज्यवादी रास्ते पर डाल दिया और इस तरह सर्वहारा की तानाशाही और समाजवादी व्यवस्था को खत्म कर दिया तथा पूंजीवाद की पुर्स्थापना कर दी। इसके लिए ख्रुश्चोवी संशोधनवादियों ने फासिज्म के ऊपर सोवियत संघ की विजय की मदहोशी, कम्युनिस्ट पार्टी में सतर्कता में ढील-ढाल, कम्युनिस्टों और मेहनतकश जनता की क्रांतिकारी शिक्षा के लिए पार्टी के विचारधारात्मक-राजनीतिक काम में कमी, पार्टी और राजतंत्र में नौकरशाही के विकास, पार्टी के सिद्धातों व नियमों को लागू करने में औपचारिकतावाद, इस खतरनाक धारणा के पैदा होने का कि केवल मुखिया, केवल नेतृत्व सब कुछ जानता है, करता है और सब कुछ सुलझाता है जबकि पार्टी के आम कार्यकर्ताओं और मेहनतकश जनता का काम है निर्देशों का पालन करना, उत्पादक शक्तियों के मुकाबले उत्पादन सम्बन्धों के पिछड़ेपन, नेतृत्वकारी कार्यकर्ताओं व उच्च पढ़े लिखे हिस्से के पतन इत्यादि का इस्तेमाल किया।" **(वही, पृष्ठ 580, अनुवाद हमारा)**

अल्बानिया की लेबर पार्टी और उके नेता अनवर होजा का कहना था :

"इस बीच चीनी नेतृत्व वर्ग संघर्ष के मार्क्सवादी- लेनिनवादी सिद्धान्त के खिलाफ विचार प्रसारित कर रहा था। 'सौ फूलों को खिलने दो, सौ विचार-शाखाओं को टकराने दो' के सिद्धान्त के साथ, जो कि वर्ग -संघर्ष का खुला निषेध है, इसने इस थीसिस का समर्थन किया कि समाजवाद के आर्थिक आधार के निर्माण के साथ बुर्जुआ एक वर्ग के रूप में समाप्त नहीं हो जाता, बल्कि पूंजीवाद से कम्युनिज्म के संक्रमण के पूरे काल में मजदूर वर्ग के साथ मौजूद रहता है।

"चौथी कांग्रेस ने घोषित किया कि शहर और देहात दोनों में समाजवाद का आर्थिक आधार निर्मित कर लिया गया है। समाजवादी क्रांति के विकास में इस ऐतिहासिक विजय के साथ शोषक वर्गों का एक वर्ग के रूप में खात्मा हो गया है।

"समाजवादी समाज के पूर्ण निर्माण में वर्ग संघर्ष के मार्क्सवादी सिद्धान्त की सही समझ और क्रांतिकारी व्यवहार के महत्व को देखते हुए कांग्रेस ने समाजवाद में वर्ग-संघर्ष के सम्बन्ध में अपनी सही अवस्थिति को स्पष्ट रूप में परिभाषित करना जरूरी माना। कांग्रेस ने जोर दिया : **'पार्टी का मानना है कि शोषक वर्गों के खात्मे के बाद भी वर्ग-संघर्ष समाज की एक मुख्य चालक शक्ति बना रहता है। ... ... जैसा कि हमारे देश के इतिहास ने दिखाया है, यह संघर्ष समाजवाद में एक वस्तुगत और अनिवार्य परिघटना है।' स्थगन हो जाने या खत्म हो जाने के बदले देश के भीतर यह तीखे रूप में जारी रहता है। यह लहरों में चलता है और तीखे रूप में जारी रहता है और बाहरी मोर्चे पर वर्ग संघर्ष के साथ घुलमिल जाता है। यह जीवन के हर क्षेत्र में होता है।**

"वर्ग-संघर्ष आंतरिक और बाह्य शक्तियों के खिलाफ चलाया जाता है। यह शोषक वर्गों के अवशेषों के खिलाफ चलाया जाता है जो अपना प्रतिरोध जारी रखते हैं, मेहनतकश जनता पर हर तरीके से दबाव डालते हैं। यह उन लोगों के खिलाफ भी चलाया जाता है जो पतित बन जाते हैं और समाजवादी समाज में नये बुर्जुआ तत्व बन जाते हैं। इसी तरह यह नौकरशाही की अभिव्यक्तियों और विकृतियों के खिलाफ, उदारवादी और रूढ़िवादी दृष्टिकोण के खिलाफ चलाया जाता है। यह चोरी और समाजवादी सम्पत्ति के गलत इस्तेमाल, सभी पराई अभिव्यक्तियों, पितृसत्तात्मक, सामंती और बुर्जुआ सारतत्व वाली पुरानी धारणाओं, आदतों और परम्पराओं, निम्न पूंजीवादी मानसिकता और धार्मिक पूर्वाग्रहों के खिलाफ चलाया जाता है। यह बुर्जुआ और संशोधनवादी विचारधारा, साम्राज्यवाद और संशोधनवाद के राजनीतिक- विचारधारात्मक दबाव व प्रभाव के खिलाफ चलाया जाता है जो काम, समाज, जीवनशैली, विज्ञान, कला और साहित्य में पराये, प्रतिक्रियावादी, पतनशील दृष्टिकोण और विचारों के स्रोत बन जाते हैं।" **(History of Party of Labour of Albania,** वही पृष्ठ **402-403,** अनुवाद हमारा, जोर मूल में)

"वर्ग-संघर्ष के द्वारा शत्रुतापूर्ण और गैर-शत्रुतापूर्ण वर्ग अंतर्विरोध हल होते हैं और समाज विकसित होता है। अल्बानिया की श्रम पार्टी को यह हमेशा स्पष्ट रहा है कि समाजवाद में शोषक वर्गों के खत्म होने के साथ शत्रुतापूर्ण अंतर्विरोध नहीं गायब हो जाते। वे गैर-शत्रुतापूर्ण अंतर्विरोधों के साथ मौजूद रहते हैं जो समाजवादी समाज की चारित्रिक विशेषता है। समाजवादी रास्ते और पूंजीवादी रास्ते के बीच, सर्वहारा विचारधारा व बुर्जुआ और संशोधनवादी विचारधारा के बीच, समाजवादी नैतिकता और निम्न पूंजीवादी मानसिकता, धार्मिक पूर्वाग्रह तथा पिछड़ी परम्पराओं के बीच, मेहनतकश जनता और शत्रुओं के बीच के अंतर्विरोध शत्रुतापूर्ण अंतर्विरोध हैं। मेहनतकश जनता के बीच के तथा समाजवादी व्यवस्था के विभिन्न पहलुओं के बीच के अंतर्विरोध गैर-शत्रुतापूर्ण अंतर्विरोध हैं।"

(वही, पृष्ठ **543,** अनुवाद हमारा)

अल्बानिया की श्रम पार्टी और अनवर होजा के ऊपर दिये गये लम्बे उद्धरणों में सोवियत संघ में पूंजीवादी पुनर्स्थापना के कारण जो बताये गये है, वे सब ऊपरी तौर पर सही लगते हैं। लेकिन पूंजीवादी पुनर्स्थापना के कारणों की गहराई से छानबीन करने में वे असफल हो जाते हैं। यही कारण है कि वे जो समाधान देते हैं, वह दरअसल समाधान ही नहीं है। दरअसल वे स्तालिन कालीन गलतियों से चिपके रहने के कारण उन्हीं गलतियों को दोहराते हैं। स्तालिन की 1936 में की गयी यह सैद्धान्तिक गलती कि सोवियत समाज में दुश्मनीपूर्ण वर्ग नहीं रह गये हैं, वे उसे पकड़े हुए हैं। वे इस सच्चाई को नहीं समझ पाते कि समाजवादी समाज, पूंजीवाद से कम्युनिज्म की ओर जाने वाला एक दीर्घकालिक संक्रमणकालीन समाज है, जिसमें वर्ग, वर्ग अंतर्विरोध और वर्ग संघर्ष चलता रहता है। इसमें लम्बे समय तक यह नहीं तय होता है कि अंतिम तौर पर पूंजीवाद विजयी होगा कि समाजवाद। इस संक्रमणकालीन समाज में पूंजीवाद के तत्व भी मौजूद रहते हैं और कम्युनिज्म के तत्व भी। अगर सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व सही तरीके से लागू किया जाय तो पूंजीवादी तत्वों को क्रमशः कमजोर किया जाता है और कम्युनिज्म के तत्वों को मजबूत किया जाता है।

वे उस भौतिक जमीन की भी पड़ताल नहीं करते, जिनसे नित नये पूंजीवादी तत्व पैदा होते रहते हैं। समाजवादी वितरण का सिद्धान्त "हरेक को उसकी क्षमता के अनुसार काम और काम के अनुसार भुगतान" में असमानता निहित होती है। यह बुर्जुआ अधिकार पूंजीवादी तत्व पैदा करता रहता है।

समाजवादी समाज में मूल्य का नियम काम करता रहता है। यह बात सही है कि सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व वाले समाजवादी समाज में मूल्य के नियम को सीमित किया जा सकता है और किया भी जाता है लेकिन उसको खत्म नहीं किया जा सकता। जिस हद तक मूल्य का नियम लागू होता है, उस हद तक पूंजीवाद की जमीन मौजूद रहती है।

समाजवादी समाज में समाजवादी सम्पत्ति के कई रूप लम्बे समय तक मौजूद रहते हैं, इसमें सार्वजनिक समाजवादी सम्पत्ति के बतौर उद्योग और सामूहिक सम्पत्ति के बतौर पर सामूहिक फार्म रहते हैं। जब तक उद्योग और कृषि तथा अन्य सभी क्षेत्र सार्वजनिक समाजवादी सम्पत्ति नहीं हो जाते, तब तक पूंजीवादी तत्वों के पैदा होने की जमीन मौजूद रहती है।

समाजवादी समाज में शारीरिक श्रम और मानसिक श्रम के बीच, उद्योग और कृषि के बीच और गांव और शहर के बीच अंतर मौजूद रहता है।

समाजवादी समाज में बाजार और मुद्रा का चलन मौजूद रहता है जिसके चलते भी नये पूंजीवादी तत्वों के पैदा होने की जमीन मौजूद रहती है।

अल्बानिया की श्रम पार्टी के नेता अनवर होजा सोवियत संघ में पूंजीवादी पुनर्स्थापना के कारणों का गहराई से पता नहीं लगा सके। इसलिए उनके समाधान भी, ऊपरी-ऊपरी ही रह गये जो वास्तव में समाधान नहीं थे।

अगर ऊपर बताये गये सभी कारण मौजूद रहते हैं तो वे समाजवादी समाज में महज कुछ पतित तत्वों को ही जन्म नहीं देंगे बल्कि वे एक पूरे के पूरे संस्तर को जन्म देंगे, भले ही वह संस्तर पहली नजर में दिखाई न पड़े। नौकरशाही की जड़ें इसी में हैं। जनता के सेवकों के शासक बन जाने की जड़ें इसी में हैं। विशेषज्ञों के बुर्जुआ बन जाने की जड़ें इसी में हैं। इसी के कारण पार्टी और राज्य के पदाधिकारी, उत्पादन और वितरण इकाइयों के प्रबंधक/संचालक तथा अन्य विशेषज्ञ और विशिष्टता प्राप्त लोग बुर्जुआ वर्ग में रूपान्तरित हो जाते हैं और पूंजीवाद की पुनर्स्थापना हो जाने की प्रवृत्ति की जड़ें उपरोक्त भौतिक आधार में ही हैं। जब तक यह आधार मौजूद है तब तक यह प्रवृत्ति मौजूद रहेगी। और चूंकि यह आधार (क्रमशः कमजोर होते हुए भी) समूचे समाजवादी दौर में मौजूद रहेगा इसलिए वर्ग और वर्ग संघर्ष समूचे समाजवादी काल में रहेंगे।

अल्बानिया की श्रम पार्टी यह घोषणा तो करती है कि मार्क्सवादी वही है जो समाजवाद में भी वर्ग संघर्ष के जारी रहने को स्वीकार करता है, लेकिन वह खुद इसके निहितार्थ को समझ नहीं पायी। वह और उसके नेता अनवर होजा वर्ग संघर्ष का मतलब पार्टी के ऊपर से शुद्धीकरण और पार्टी द्वारा समाजवादी शिक्षा अभियान समझते रहे।

अनवर होजा ने "साम्राज्यवाद और क्रांति" नामक पुस्तक में चीन की महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के बारे में लिखा :

> "घटनाओं के प्रवाह ने यह दिखाया है कि महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति न तो क्रांति थी, न महान, न सांस्कृतिक और खासकर न ही जरा ही सर्वहारा। यह उन मुट्ठी भर प्रतिक्रियावादियों को खत्म करने के लिए समूचे चीन के पैमाने का महज तख्ता पलट था जिन्होंने सत्ता पर कब्जा कर लिया था।
>
> "वास्तव में सांस्कृतिक क्रांति धोखे का प्रहसन थी। इसने चीन की कम्युनिस्ट पार्टी और जनसंगठनों दोनों को समाप्त कर दिया और चीन को नयी अराजकता में धकेल दिया। इस क्रांति का नेतृत्व गैर मार्क्सवादी तत्वों ने किया था और वे अन्य गैर मार्क्सवादी और फासीवादी तत्वों के सैनिक तख्तापलट से समाप्त कर दिये गये हैं।" (**Enver Hoxha, Reflections on China, Vol-II,Ch.II-Page 4** अनुवाद हमारा)

आधिकारिक इतिहास में जो इसका मूल्यांकन पेश किया गया वह भी इसे खारिज करने के साथ इसे समझ पाने की अक्षमता को दिखाता है :

> "इन अवस्थितियों से अल्बानिया की श्रम पार्टी ने चीन की सांस्कृतिक क्रांति का समर्थन किया (पहले वह इसका समर्थन कर चुकी थी-लाल सलाम) लेकिन तब भी इसने पूंजीवादी और संशोधनवादी तत्वों को समाप्त करने के मुख्य उद्देश्य का समर्थन किया जो कि इस क्रांति को हासिल करना था, न कि इस उठापटक में इस्तेमाल हर कार्यनीति और तरीके का। इस उठा पटक को क्रांति कहा गया जो, जैसा कि घटनाओं के प्रवाह ने दिखाया, 'न तो क्रांति थी, न महान, न सांस्कृतिक और खासकर न ही जरा सर्वहारा।' अल्बानिया की श्रम पार्टी ने चीनी सांस्कृतिक क्रांति में अराजक चरित्र के व्यवहार, मजदूर वर्ग और उसकी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व के अभाव को स्वीकार नहीं किया। इसने चीन में समाजवाद के, चीनी जनता और चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के हित की रक्षा की, लेकिन इसने विरोधी प्रवृत्तियों के द्वारा विरोधी लाइनों पर गुटीय संघर्ष की किसी भी रूप में रक्षा नहीं की, जिनके बीच सशस्त्र संघर्ष तक हुए और जो सर्वहारा की तानाशाही और समाजवाद को बचाने के लिए नहीं हुए बल्कि अपने लिए सत्ता पर कब्जा करने के लिए हुए।" (वही, पृष्ठ 457, अनुवाद हमारा)

चीन की महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति चीन के पूंजीवादी पथगामियों के खिलाफ लक्षित थी यानी उन लोगों के खिलाफ जो पार्टी और शासन के महत्वपूर्ण पदों पर थे और पूंजीवाद की ओर ले जाने का रास्ता अपना रहे थे। ल्यू शाओ ची और देंग स्याओ पिंङ इनके नेता थे। लेकिन ये अकेले नहीं थे। ये चीन के समाजवादी समाज में मौजूद पूंजीपति वर्ग के प्रतिनिधि थे। यह वर्ग केवल पुराने पूंजीपति वर्ग के अवशेषों से ही नही निर्मित था। इसमें समाजवाद में पैदा हुआ नया संस्तर भी शामिल हो रहा था, जिसका जिक्र ऊपर किया जा चुका है। इसने पार्टी और शासन में ऊपर से नीचे तक गहरी जड़ें जमा ली थीं।

होजा और अल्बानिया की पार्टी इसी को नहीं समझ पाये। वे बार-बार यह सवाल उठाते हैं कि इस क्रांति को पार्टी के नेतृत्व में क्यों नहीं चलाया गया, पार्टी का इस पर पूर्ण नियंत्रण क्यों नहीं रहा, इतनी अराजकता क्यों रही? मसले के सारतत्व को न पकड़ पाने के कारण ही वे बार-बार यह सवाल उठाते हैं।

सांस्कृतिक क्रांति को चलाने का निर्णय पार्टी द्वारा ही लिया गया और 16 मई 1966 को सर्कुलर जारी किया गया। फिर पार्टी द्वारा इसे चलाने के सम्बन्ध में 16 सूत्रीय निर्देश अगस्त 1966 में जारी किये गये। इन तथ्यों से स्पष्ट है कि सांस्कृतिक क्रांति पार्टी के नेतृत्व में चल रही थी लेकिन क्या पूरा पार्टी नेतृत्व इस पर एकमत था? नहीं। और वह हो भी नहीं सकता था क्योंकि यह क्रांति अंशतः पार्टी के ही एक हिस्से के खिलाफ लक्षित थी-सत्ता में बैठे पूंजीवादी पथगामी लोगों के खिलाफ। इस बुर्जुआ हेडक्वार्टर के प्रधान व उप प्रधान थे ल्यू

और देंङ। ल्यू पार्टी का उपाध्यक्ष और देश का राष्ट्रपति था। जबकि देंङ पार्टी का महासचिव। पार्टी का सारा सांगठनिक तानाबाना उसके हाथ में था।

यदि सांस्कृतिक क्रांति इनके नेतृत्व में चलती तो क्या होता? क्रांति किस पर प्रहार करती? कहा जा सकता है कि इन्हें हटा कर फिर पार्टी द्वारा क्रांति को संचालित करना चाहिए था। लेकिन क्या इन्हें हटाना इतना आसान था? क्या वे अकेले लोग थे?

स्पष्ट है कि पार्टी और सत्ता में जमे इन लोगों को जन सैलाब से ही हिलाया जा सकता था। और फिर जनता द्वारा अपना भाग्य अपने हाथ में लेने की चीज पूर्णतया पार्टी के निर्देशन में नहीं फलीभूत हो सकती। इस स्वतंत्र पहलकदमी में एक हद तक अराजकता निहित है। और फिर वह क्रांति ही क्या जिसमें अराजकता न हो? क्रांति का समय अराजकता का चरम होता है क्योंकि उसमें एक बंधी-बंधाई व्यवस्था ध्वस्त हो रही होती है और उस विध्वंस के बीच से नयी व्यवस्था निकल रही होती है। क्रांतियों में अराजकता से ही व्यवस्था का विकास होता है। यदि ऐसा न हो तो कम से कम इस तरह की घटना को क्रांति नहीं कहा जा सकता। इसीलिए पार्टी द्वारा चलाये समाजवादी शिक्षा अभियान और सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति में फर्क होता है। होजा जब बार-बार पार्टी के किनारे लग जाने और अराजकता फैलने का रोना रोते हैं तो इसी फर्क के कारण। वे समाजवादी शिक्षा अभियान चाहते थे, सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति नहीं।

यही बात वास्तव में अल्बानिया की श्रम पार्टी का आधिकारिक इतिहास कहता है :

> "इसलिए छठी कांग्रेस ने मांग की थी कि विचारधारात्मक, सांस्कृतिक क्रांति निरंतर जारी रखी जाय। धर्म, पिछड़ी परम्पराओं, निम्न पूंजीवादी मानसिकता, काम व समाजवादी सम्पत्ति के प्रति परायी मनोवृत्ति के खिलाफ, महिलाओं की पूर्ण मुक्ति, परिवार में जनवादी जीवन के लिए संघर्ष निरंतर जारी रखा जाय। विचारधारात्मक मोर्चे पर संघर्ष तब तक जारी रहेगा, जब तक वर्ग संघर्ष जारी रहेगा और जैसा कि कांग्रेस ने फिर से इंगित किया यह पूंजीवाद से कम्युनिज्म तक के समूचे संक्रमण काल में जारी रहता है।"
>
> (वही, Page-470A अनुवाद हमारा)

चीन की महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति में केवल विचारों, आदतों, बुर्जुआ-पेटी बुर्जुआ मनोवृत्तियों, निजी सम्पत्ति से जुड़े विचारों इत्यादि के खिलाफ संघर्ष नहीं चलाया गया था। यह सब करने के साथ पूंजीवादी पथगामियों को सत्ता से उखाड़ फेंका गया था, नीचे से सत्ता पर कब्जा किया गया था, तीन एक में की क्रांतिकारी कमेटियां बनायी गयी थीं इत्यादि। यह सब करके सर्वहारा की तानाशाही को और मजबूत बनाया गया था।

इस तरह सांस्कृतिक क्रांति को समझने में अपनी पूर्ण अक्षमता प्रदर्शित कर उसका विरोध करते हुए वे अंततः वहीं पहुंच गये जहां ख्रुश्चोव-ब्रेझनेव और सारे संशोधनवादी पहुंचे थे। सारे बुर्जुआ और संशोधनवादियों के सुर से सुर मिलाकर वे सांस्कृतिक क्रांति को गाली देने लगे। देंङ ने बाद में इसे महान विपदा घोषित किया। होजा के लिए भी यह महान विपदा ही साबित हुई। इसने उन्हें संशोधनवादियों की पांतों में बिठा दिया।

आगे चलकर अनवर होजा ने माओ को निम्न पूंजीवादी क्रांतिकारी और राष्ट्रवादी घोषित किया।

जब सोवियत संघ में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना हो गयी तब अनवर होजा के समक्ष भी पूंजीवादी पुनर्स्थापना के कारणों को समझने, समाजवादी समाज के चरित्र तथा सर्वहारा वर्ग की तानाशाही को बनाये रखने व कम्युनिज्म की ओर बढ़ने के सवाल तीखे रूप में आ उपस्थित हुए। यह स्पष्ट था कि इन सवालों के जवाब पाये बिना समाजवादी समाज को आगे नहीं बढ़ाया जा सकता है। इसके साथ ही यह भी स्पष्ट हो गया कि इसके लिए मार्क्सवाद-लेनिनवाद के पुराने सिद्धान्त नाकाफी हैं। मार्क्स-लेनिन में इन सवालों के जवाबों के कुछ बीज रूप तो हैं लेकिन इससे आगे मुकम्मल जवाब नहीं। स्तालिन के पास न केवल इनके जवाब नहीं थे बल्कि वे सवाल को सही रूप में पेश करने में भी असफल रहे। उन्होंने समाजवादी समाज में पुनर्स्थापना का खतरा मूलतः बाहर से, साम्राज्यवाद की ओर से माना। ऐसे में केवल पुराने सिद्धान्तों तक खुद को सीमित रखने से काम नहीं चलने वाला था। खासकर स्तालिन को सौ प्रतिशत सही मानकर उनसे जौ मात्र भी इधर-उधर न होना खतरनाक था। अनवर होजा ने यही किया।

इसके बदले माओ ने समस्या की गहराई में पैठने का प्रयास किया और वे सोवियत संघ में पूंजीवादी पुनर्स्थापना की जांच-पड़ताल करते हुए सर्वथा नवीन निष्कर्षों तक पहुंचे। इसके लिए उन्हें मार्क्स के 'गोथा कार्यक्रम की आलोचना', लेनिन की "राज्य और क्रांति" तथा अक्टूबर क्रांति के बाद की रचनाओं मे महत्वपूर्ण सूत्र मिले। इसके अलावा पेरिस कम्यून के मूल्यवान अनुभव मौजूद ही थे। इन सबसे प्रस्थान करते हुए माओ समाजवादी समाज के चरित्र के अनुद्घाटित पहलुओं तक पहुंचने में कामयाब हुए और साथ ही इस चरित्र से उद्भूत पूंजीवाद की पुनर्स्थापना के सम्भावित खतरों तक भी। इससे भी आगे बढ़ कर उन्होंने इस पुनर्स्थापना को रोकने तथा सर्वहारा वर्ग की तानाशाही के तहत समाजवादी क्रांति को आगे बढ़ाने के लिए महान सर्वहरा सांस्कृतिक क्रांति का अप्रतिम सिद्धान्त पेश किया। इसके पश्चात 1966 से 1976 तक उन्होंने चीन में इस क्रांति को स्वयं नेतृत्व प्रदान किया।

महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति का यह सिद्धान्त मार्क्सवाद-लेनिनवाद में माओ का महान योगदान था। इसने मार्क्सवाद-लेनिनवाद को एक नयी ऊंचाई तक पहुंचा दिया। इसने मार्क्सवाद-लेनिनवाद को मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा के स्तर तक पहुंचा दिया। अब मार्क्सवादी वह नहीं रह गया जो केवल वर्ग संघर्ष और सर्वहारा की तानाशाही को स्वीकार करता हो बल्कि मार्क्सवादी होने केलिए यह

आवश्यक हो गया है कि वह समाजवादी समाज में सर्वहारा वर्ग की तानाशाही के तहत वर्ग-संघर्ष को अंत तक चलाने, कम्युनिज्म की स्थापना तक चलाने की आवश्यकता को स्वीकार करता हो, वह समाजवादी समाज में सांस्कृतिक क्रांतियों की आवश्यकता को स्वीकार करता हो।

अनवर होजा मार्क्सवाद-लेनिनवाद में इस विकास को, माओ के इस महान योगदान को नहीं आत्मसात कर पाये। उन्होंने चीन की महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति की तर्ज पर अपने यहां विचारधारात्मक-राजनीतिक शिक्षा अभियान तो चलाया, लेकिन वे वहां सांस्कृतिक क्रांति नहीं छेड़ पाये। वे चीन की महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति से वैचारिक और व्यावहारिक तौर पर एक दूरी बनाये रहे। वे कभी नहीं स्वीकार कर पाये कि महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति का सिद्धान्त मार्क्सवाद- लेनिनवाद में गुणात्मक विकास है।

इसका परिणाम वही हुआ जो प्लेखानोव और काउत्स्की के साथ हुआ था। मार्क्सवाद में नये विकास को न समझ पाने, न आत्मसात कर पाने के कारण वे पुरानी अवस्थितियों पर अड़े रहे और अंततः संशोधनवादी हो गये। समाजवाद की नयी परिस्थितियों में मार्क्सवाद के सृजनात्मक विकास से इंकार कर वे रूढ़िवादी मार्क्सवादी बने रहे और इस तरह संशोधनवादी हो गये क्योंकि माओ विचारधारा के खण्डन का उनका प्रयास उन्हें मार्क्सवाद की गलत, विकृत व्याख्या करने तक ले गया। द्वन्द्वात्मक गति ने रंग दिखाया और रूढ़वादी मार्क्सवादी संशोधनवादी हो गया।

IV

ख्रुश्चोव द्वारा पूंजीवादी पुनर्स्थापना करने के बाद से गोर्बाचोव तक के सोवियत संघ को जो पार्टियां समाजवादी मानती थीं, वे खुद संशोधनवादी पार्टियां थीं और उनके वही तर्क थे जो ख्रुश्चोवी संशोधनवादियों के तर्क थे। ऐसी पार्टियों के लिए सोवियत संघ में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना 1991 में येल्तसिन के सत्ता में आने के बाद हुई। कुछ ऐसी भी पार्टियां थीं जो सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी को संशोधनवादी भटकाव का शिकार तो मानती थीं, लेकिन ख्रुश्चोव के बाद के काल के सोवियत संघ को समाजवादी देश मानती थीं। हमारे देश में ऐसी संशोधनवादी पार्टी भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) थी। यह पार्टी देंङ के बाद के चीन को आज भी समाजवादी देश मानती है। यह उनके "बाजार" समाजवाद की समर्थक है। यह क्यूबा, वियतनाम और उत्तर कोरिया में भी समाजवाद देखती है।

जबकि हकीकत यह है कि इन सभी देशों में पूंजीवादी पुनर्स्थापना हो चुकी है।

हमारे देश में एक समय में कम्युनिस्ट क्रांतिकारी रहा संगठन भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मा.ले.)-लिबरेशन भी गोर्बाचोव की पेरेस्त्रोइका और ग्लासनोस्त का समर्थन तथा पूंजीवादी पुनर्स्थापना होने के बाद भी चीन को समाजवादी देश कहता रहा है। यह संगठन भी संशोधनवादी बहुत पहले हो चुका था।

A. भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी)

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) ख्रुश्चोव के सत्तादखल के बाद से गोर्बाचोव तक के काल तक सोवियत संघ को समाजवादी देश मानती रही है। इसने येल्तसिन के आने के बाद से ही सोवियत संघ में पूंजीवादी पुनर्स्थापना कहना शुरू किया। भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (CPI) भी ऐसा करती है। लेकिन भारत की कम्युनिस्ट पार्टी पूरे तौर पर ख्रुश्चोवी संशोधनवाद के साथ खड़ी थी। इसलिए उसका ऐसा मानना स्वाभाविक था। इसलिए इस पार्टी की अवस्थितियों की चर्चा करना यहां अप्रासंगिक है।

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) की स्थिति इससे थोड़ा भिन्न है। यह संशोधनवाद के विरुद्ध संघर्ष करने के नाम पर 1964 में अस्तित्व में आयी थी। 1964 में अपनी सातवीं कांग्रेस में (इसके पहले 6 कांग्रेसें एकीकृत भारत की कम्युनिस्ट पार्टी की हो चुकी थी) इसने अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आंदोलन में चल रही "महान बहस" में कोई अवस्थिति नहीं ग्रहण की थी। यह वह समय था जब ख्रुश्चोवी संशोधनवाद के विरुद्ध चीन की कम्युनिस्ट पार्टी और अल्बानिया की श्रम पार्टी खुले तौर पर संघर्ष चलाने के लिए मजबूर हो गयी थीं।

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) ने अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आंदोलन में चल रही "महान बहस" के संदर्भ में 1968 में बर्दवान प्लेनम बुलाया। इस प्लेनम में इसकी अवस्थिति लगभग सभी अंतर्राष्ट्रीय विचारधारात्मक मुद्दों पर चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के साथ थी। इसने तीन शांति पूर्णों पर, स्तालिन के मूल्यांकन के सवाल पर, युगोस्लाविया के प्रश्न पर, युद्ध और शांति के प्रश्न पर और दुनिया के बड़े अंतर्विरोधों में अलग-अलग अंतर्विरोधों के महत्व पर, बिरादराना पार्टियों के आपसी सम्बन्धों पर चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की जैसी अवस्थिति अपनायी थी।

इसी के साथ, इसने चीन की कम्युनिस्ट पार्टी से भिन्न अवस्थिति वियतनाम में जारी मुक्ति संग्राम में अपनायी थी, जिसमें इस पार्टी का यह कहना था कि अमरीकी सम्राज्यवाद के विरुद्ध वियतनामी जनता के मुक्ति संग्राम में चीन और सोवियत संघ को मिलकर साझी संयुक्त कार्रवाई करनी चाहिए। हालांकि, साझी संयुक्त कार्रवाई न करने के कारणों के बारे में यह पार्टी चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के तर्कों

से सहमत थी फिर भी इसकी राय साझी कार्रवाई के पक्ष में थी। इसके अतिरिक्त, इसकी चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की कोई खास आलोचना नहीं थी।

बर्दवान प्लेनम में आंध्रप्रदेश के साथियों की तरफ से एक दस्तावेज पेश किया गया था। दस्तावेज के अनुसार, सोवियत संघ में संशोधनवाद इस हद तक फैल गया है कि संशोधनवादी लोग सोवियत संघ के राज्य में पूंजीवादी तत्वों के राजनीतिक प्रतिनिधि हो गये हैं और वे तेजी के साथ सोवियत संघ में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना कर रहे हैं। इसी के साथ वे अमरीकी साम्राज्यवाद के साथ सांठ-गांठ कर रहे हैं तथा विश्व युद्ध की वैश्विक रणनीति में अमरीकी साम्राज्यवाद के संश्रयकारी बन चुके हैं।

इस दस्तावेज के अुनसार, चूंकि सोवियत नेतृत्व अमरीकी साम्राज्यवाद का संश्रंयकारी हो गया है और वह विश्व प्रभुत्व के लिए उसके साथ सांठगांठ कर रहा है और चूंकि यह अमरीकी साम्राज्यवाद को दुश्मन के बतौर मानने से इंकार कर रहा है, इसलिए वियतनाम के प्रश्न पर सोवियत संघ के साथ संयुक्त कार्रवाई करने से इंकार करने के मामले में चीन की अवस्थिति सही है।

बर्दवान प्लेनम ने आंध्रप्रदेश के साथियों द्वारा प्रस्तुत दस्तावेज को खारिज कर दिया और सोवियत संघ को समाजवादी देश के बतौर स्वीकार किया।

बर्दवान प्लेनम के दस्तावेज में चीन में उस समय चल रही महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के बारे में कोई जिक्र नहीं था। जब इस पर सवाल उठा तो यह कहा गया कि 'पीपुल्स डेमोक्रेसी' में एक लेख फिलहाल इस सम्बन्ध में पार्टी की अवस्थिति है। इस पर और ज्यादा विस्तृत बात आगे आयेगी।

यहां यह ध्यान रखने की बात है कि बर्दवान प्लेनम के पहले नक्सलबाड़ी किसार उभार हो चुका था। इस किसान उभार का चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने समर्थन किया था। इस पार्टी के नेतृत्व को संशोधनवादी घोषित कर दिया था। ऐसी स्थिति में इस पार्टी ने अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आंदोलन में उठी 'महान बहस' में सभी महत्वपूर्ण विषयों पर चीन की अवस्थिति को सही मानते हुए भी चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की पहले नरम आलोचना, फिर बाद में उसकी कड़ी आलोचना की।

उसी वर्ष, यानी 1968 में इस पार्टी की आठवीं कांग्रेस हुई। इस कांग्रेस में पारित राजनीतिक प्रस्ताव में कहा गया :

> "जब तक आधुनिक संशोधनवादी सिद्धान्तों को पराजित और रद्द नहीं किया जाता तब तक न तो विश्व समाजवादी खेमे और कम्युनिस्ट आंदोलन की एकता को सुनिश्चित किया जा सकता है और न ही इसके आगे के बिखराव और टूट-फूट के खतरे को टाला जा सकता है।" (आठवीं कांग्रेस में पारित राजनीतिक प्रस्ताव से)

यहां आधुनिक संशोधनवादी सिद्धान्तों से इसका आशय ख्रुश्चोवी संशोधनवाद से है। इसके अनुसार ख्रुश्चोवी संशोधनवादी गुट के सत्तासीन होने के बाद लम्बे समय तक सोवियत संघ समाजवादी देश बना रहा। इसकी यह मान्यता रही है कि 1976 में चीन में पूंजीवादी पुनर्स्थापना नहीं हुई, बल्कि यहां 'बाजार समाजवाद' व चीनी विशिष्टताओं वाला समाजवाद कायम है। इस पार्टी के अनुसार, वियतनाम, उत्तरी कोरिया और क्यूबा में समाजवाद कायम है। इसीलिए यह अभी भी समाजवादी खेमे के अस्तित्व को स्वीकार करती है।

यही कारण है कि 1992 में अपनी चौदहवीं कांग्रेस में, इसने विचारधारात्मक मुद्दों पर एक प्रस्ताव पारित किया, यह वह समय था जब सोवियत संघ का विघटन हो गया था और वह खुले पूंजीवाद की ओर जा चुका था। प्रस्ताव में कहा गया था :

> "विचारधारात्मक मुद्दों पर 1968 में बर्दवान प्लेनम में एक बार फिर सी.पी.आई. (एम.) ने ख्रुश्चोव की अगुवाई में सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा हिमायत किये गये आधुनिक संशोधनवाद के विरुद्ध इस अनथक संघर्ष को आगे चलाना पड़ा था। दक्षिणपंथी भटकाव पर प्रहार करते हुए सी.पी.आई. (एम.) को चीन की कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा आगे बढ़ाने वाले वाम दुस्साहसवादी भटकाव के विरुद्ध सघन संघर्ष चलाना पड़ा था, जो भारतीय कम्युनिस्ट आंदोलन पर बहुत प्रतिकूल प्रभाव रखता था। ये ही वे संघर्ष हैं जिन्होंने मार्क्सवाद-लेनिनवाद के क्रांतिकारी ध्येय को बुलंद रखने में सी.पी.आई. (एम.) के प्रयासों को शक्ल दी है।"

इसी में आगे कहा गया है :

" 3-0 विश्व सामाजिक अंतर्विरोध

> 1- सी.पी.आई. (एम.) इस समझदारी पर अभी भी कायम है कि मौजूदा विश्व घटनाक्रम को मौजूदा युग के चार बुनियादी अंतर्विरोधों के उचित अध्ययन से ही ठीक से समझा जा सकता है, ये हैं : विश्व समाजवाद की शक्तियों और साम्राज्यवाद के बीच के, साम्राज्यवाद और विकासशील दुनिया की जनता के बीच के, खुद साम्राज्यवादी देशों के बीच के और पूंजीवादी देशों में पूंजी और श्रम के बीच के।" (Page- 7, अनुवाद हमारा)

"4-0 समाजवादी देशों में हाल के घटनाक्रम

> " ii सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा 1985 में शुरू किये गये सुधारों ने 1986 की 27वीं कांग्रेस में ठोस शक्ल ले ली थी। सी.पी.आई. (एम) ने सोवियत संघ में सुधारों की आवश्यकता की समझदारी का, समाजवाद को मजबूत करने के उनके घोषित क्रांतिकारी लक्ष्य का होने का स्वागत किया था।
>
> iii अतीत की कुछ गलतियों और भटकावों को सुधारने और दूर करने के लिए सुधार की आवश्यकता उठी थी, जो समाजवादी अर्थव्यवस्था को सापेक्ष ठहराव की ओर ले गयी थी; लोगों की सामाजिक चेतना को समृद्ध करने की आवश्यकता, जो कई वर्षों से उपेक्षित थी; नौकरशाही को खत्म करने की आवश्यकता जो जनवादी अधिकारों और नागरिक आजादी का उल्लंघन

करने की ओर ले गयी, समाजवादी जनवाद को मजबूत करने ओर लोगों की बढ़ रही जरूरतों को पूरा करने की और सामाजिक और आर्थिक विकास को त्वरित करने की आवश्यकता। (Page 9 अनुवाद हमारा)

जैसा कि इनकी चौदहवीं पार्टी कांग्रेस का दस्तावेज कहता है कि इन्होंने 27वीं कांग्रेस के दस्तावेजों में प्रस्तुत गोर्बाचेव के सुधार कार्यक्रमों का स्वागत किया था। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की 28वीं कांग्रेस में कुछ नकारात्मक प्रवृत्तियों का जिक्र करते हुए इन्होंने मुख्यतया इसका स्वागत किया। 29वीं कांग्रेस के मसविदा दस्तावेजों में खुलकर मार्क्सवाद-लेनिनवाद का परित्याग कर दिया गया और उसके स्थान पर देश और दुनिया के सभी समाजवादी व जनवादी विचारों को स्वीकार कर लिया गया। गोर्बाचेव ने 28वीं कांग्रेस में किसी वर्ग के अधिनायकत्व न होने की बात की। व्यवहार में पार्टी की नेतृत्वकारी भूमिका समाप्त कर दी। देश के राष्ट्रपति की शक्तियों पर पार्टी का कोई नियंत्रण नहीं रह गया। इस प्रकार 1991 तक आते आते
सोवियत संघ का विघटन हो गया।

सी.पी.आई.(एम) सोवियत संघ में तब तक समाजवाद मानती रही जब तक कि सोवियत संघ ने खुद ही अपने को समाजवादी कहना बंद नहीं किया। यह उसी तरह की बात है कि जब तक कोई डाकू ये कहना शुरू न कर दे कि वह डाकू है तब तक उसे डाकू मत मानो। यह पार्टी 1956 से ही सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी में आधुनिक संशोधनवादी सिद्धान्तों का प्रभुत्व देखती रही है। यह उस पार्टी को संशोधनवादी भटकावों से ग्रस्त समझती रही है। इसका दावा है कि यह संशोधनवादी भटकावों के विरुद्ध अनथक संघर्ष चलाती रही है।

वह यह नहीं बताती कि यदि संशोधनवादी भटकावों से ग्रस्त कोई पार्टी लम्बे समय तक सत्तासीन रहे तो वह किस वर्ग की सेवा करेगी? यदि संशोधनवाद मजदूर आंदोलन के भीतर पूंजीवादी विचारधारा है, यदि संशोधनवादी मजदूर आंदोलन के अंदर पूंजीपति वर्ग और पूंजीवाद के सामाजिक आधार होते हैं और इसीलिए कम्युनिस्ट पार्टी के अंदर संशोधनवाद की तमाम शक्लों के विरुद्ध निर्मम संघर्ष चलाया जाता है तो फिर सत्ता में आने के बाद वह मजदूर वर्ग की सेवा कैसे कर सकता है? वह समाजवाद को किस तरह ऊंचे स्तर पर ले जा सकता है? ऐसा तो हो नहीं सकता कि जो विचारधारा सत्ता में आने से पहले पूंजीपति वर्ग की सेवा करे, वह सत्ता में आने के बाद अपने विपरीत में आचरण करने लगे।

> "सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व यानी कि व्यापक बहुमत का अल्पमत पुराने शोषक वर्गों के ऊपर अधिनायकत्व जो पूंजीवादी अधिनायकत्व के ठीक विपरीत है जहां व्यापक बहुमत के ऊपर अल्पमत की तानाशाही होती है। यह (सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व) वर्ग से वर्ग विहीन समाज तक के संक्रमणकाल के दौरान राज्य का चरित्र होता है।" (On certain ideological Issues, Resolution Adopted at the 14th Congres of CPI(M), Madras, Jan 3-9- 1992, internet ed., page 13)

इस पार्टी के अनुसार, सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व अल्पमत में रहने वाले पुराने शोषक वर्गों पर लागू होता है। समाजवादी समाज में नये पैदा होने वाले पूंजीवादी तत्वों का जिक्र तक नहीं है। समाजवादी समाज एक बार कायम हो जाने के बाद इनके अनुसार आर्थिक प्रबन्धन का मामला, लोगों की बढ़ती मांगों को पूरा करने का मामला यानी कि उत्पादक शक्तियों को लगातार विकसित करने का मामला सामने रहता है। समाजवादी समाज में वर्ग संघर्ष केन्द्रीय मामला नहीं रहता है।

यहां समाजवादी समाज के चरित्र को समझने की इस पार्टी के नेतृत्व की समस्या नहीं है। 1992 में हुई 14वीं कांग्रेस और यहां तक 1968 में सम्पन्न बर्दवान प्लेनम से पहले चीन में महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति शुरू हो गयी थी। दरअसल, 1968 में ही सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के बारे में इस पार्टी को अपनी अवस्थिति अपनाने की मांग हुई थी। नक्सलबाड़ी किसान उभार और उसको चीन की पार्टी से मिला समर्थन इस पार्टी द्वारा चीन की कम्युनिस्ट पार्टी से दूरी बनाने का एक तात्कालिक कारण हो सकता है। लेकिन यह बुनियादी कारण नहीं है।

बुनियादी कारण इस पार्टी की 1964 में हुई सातवीं कांग्रेस में हैं। इस कांग्रेस द्वारा पारित दस्तावेज में भारतीय क्रांति को शांतिपूर्ण तरीके से सम्पन्न करने की बात घुमा फिरा कर कही गयी है। जिस बात को सी.पी.आई का कार्यक्रम सीधे-सीधे कहता है, उसी को सी.पी. आई. (एम.) का कार्यक्रम घुमा फिरा कर कहता है। ऐसी हालत में जिस पार्टी की कार्यसूची में यदि क्रांति नहीं हो तो उसे इसी व्यवस्था में कुछ सुधारों की लड़ाई तक ही सीमित रहना था। इसलिए ऐसी पार्टी समाजवाद के अंतर्गत वर्ग-संघर्ष को जारी रखने तथा सर्वहारा अधिनायकत्व को जीवन के हर क्षेत्र में लागू करने की बात स्वीकार नहीं कर सकती।

इसलिए जब चीन में पूंजीवादी पुनर्स्थापना हो गयी, तो इस पार्टी को चीन में फलता-फूलता बाजार समाजवाद दिखाई पड़ने लगा। यह चीन के आधुनिकीकरण के उत्पादक शक्तियों के विकास की पुरजोर समर्थक हो गयी। देंङ द्वारा जब यह घोषणा कर दी गयी कि महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति चीन के लिए भारी विपदा थी तो इस पार्टी ने उसे शब्दशः स्वीकार कर लिया।

समाजवादी समाज के अंतर्गत यह राज्य के वर्ग चरित्र बनाये रखने, समाजवादी जनवाद को मजबूत करने और उसे गहराई प्रदान करने, आर्थिक प्रबंधन के तरीकों में समय रहते परिवर्तन करने के क्षेत्रों में समस्यायें देखती है। इसी के साथ ही यह सोवियत संघ में क्रांतिकारी नैतिकता के मानकों में क्षरण और विचारधारात्मक क्षेत्र में गंभीर भटकावों की समस्या को पार्टी और राज्य से लोगों को अधिकाधिक अलगाव में ले जाने वाला आधार बताती है। इस पार्टी के अनुसार, इन सब कारकों ने अंदरूनी और बाहरी प्रतिक्रांतिकारी शक्तियों को मौका दिया कि वे समाजवादी समाज को खत्म कर दें।

यहां सी.पी.आई (एम) कहीं भी समाजवादी समाज में वर्ग, वर्ग अंतर्विरोधों और वर्ग-संघर्ष को जारी रखने की बात नहीं करती। दरअसल, वह चीन में हुई महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति की विरोधी रही है। वह चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की 8वीं कांग्रेस में पारित दस्तावेज की इस बात से सहमत रही है कि चीन में दुश्मनी पूर्ण वर्गों के बीच कोई बुनियादी अंतर्विरोध नहीं रह गये हैं, अपितु बुनियादी अंतर्विरोध तेज गति से आर्थिक और सांस्कृतिक विकास की लोगों की मांग और लोगों की जरूरतों से कम महसूस की जाने वाली अर्थव्यवस्था और संस्कृति की मौजूदा स्थिति के बीच का है। इससे उत्पादक शक्तियों के विकास और देश के औद्योगिकीकरण की मुख्य दिशा निकलती थी।

सी.पी.आई. (एम.) के नेता हरकिशन सिंह सुरजीत ने सांस्कृतिक क्रांति के बारे में लिखा :

> "इतिहास ने सिद्ध कर दिया है कि सांस्कृतिक क्रांति चीन की या मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्तों की वस्तुगत जरूरतों को प्रतिबिम्बित नहीं करती थी। इसने कृषि और उद्योग में उत्पादक शक्तियों को आगे बढ़ाने के महत्वपूर्ण कार्यभार में बाधा पैदा की और जिसका परिणाम गम्भीर आर्थिक पश्चगति में हुआ। इसने कम्युनिस्ट पार्टी के संगठन के बुनियादी सिद्धान्तों की अवहेलना की। इसने व्यक्ति पूजा को बढ़ावा दिया और यह बदला लेने की कार्रवाई में पतित हो गयी। वस्तुतः इसने पार्टी नेतृत्व और जनवादी केन्द्रीयता की समूची व्यवस्था को ध्वस्त कर दिया। ... ... " **(Lessons of Chinese Revolution, The Marxist, Vol. 15, N0-4, Oct-dec 1999 अनुवाद हमारा)**

दअसल चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के भीतर दो कार्यदिशाओं के बीच संघर्ष लम्बे समय से चल रहा था। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की आठवीं कांग्रेस में पारित दस्तावेज में समाजवादी समाज की चालक शक्ति के रूप में वर्ग संघर्ष नही बल्कि उत्पादक शक्तियों के विकास को माना गया था। माओ लगातार समाजवादी समाज में भी वर्ग-संघर्ष को केन्द्रीय कड़ी मानते थे। इन दो कार्यदिशाओं के बीच संघर्ष महान अग्रगामी छलांग और "सौ फूल खिलने दो और सौ विचारधाराओं में होड़ होने दो" के दौरान चला और इसके बाद समाजवादी शिक्षा अभियान के दौरान चला। लेकिन लिउ और देंङ ने लगातार इन अभियानों को असफल करने में पूरी ताकत लगा दी। अब यह दो कार्यदिशाओं के बीच संघर्ष का सवाल महज बहस का सवाल नही रह गया था। यह सवाल इस बात का था कि समाजवादी समाज कम्युनिज्म की ओर जायेगा या पूंजीवाद की पुनर्स्थापना की ओर जायेगा। यह समाजवादी व्यवस्था को आगे बढ़ाने का जीवन मरण का प्रश्न था।

चीन की कम्युनिस्ट पार्टी और इसके नेता माओ के समक्ष सोवियत संघ में ख्रुश्चोव के सत्तासीन होने और वहां पूंजीवादी पुनर्स्थापना का उदाहरण मौजूद था। तब माओ ने महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति का सूत्रपात पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के फैसले के बाद किया।

इस महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के निशाने पर पार्टी और राज्य के शीर्ष में बैठे पूंजीवादी पथगामी लोग थे। इनकी जड़ें पार्टी और राज्य के विभिन्न स्तरों पर देश भर में गहराई से फैली हुई थीं। यह मामला महज एक दो या मुट्ठीभर लोगों
को पार्टी व राज्य से बाहर करने का ही नहीं था। यह हजारों-लाखों लोगों के दृष्टिकोण को बदलने का मामला था। यह करोड़ों करोड़ लोगों की भागीदारी के बिना सम्भव नहीं हो सकता था।

माओ ने कहा था कि चीन में अभी यह नहीं कहा जा सकता कि समाजवाद अंतिम तौर पर विजयी हो गया है। पूंजीवादी पुनर्स्थापना रोकने के लिए समय-समय पर कई सांस्कृतिक क्रांतियां करनी होंगी। माओ और देंङ समाजवादी समाज की समस्याओं को हल करने के बारे में दो विपरीत दिशाओं में खड़े थे। माओ जहां कहते थे कि "क्रांति कुंजीभूत कड़ी है" वहीं देंङ उत्पादक शक्तियों के विकास पर जोर देता था। ऐसा नहीं है कि माओ उत्पादक शक्तियों के विकास की बात नहीं करते थे। उनका कहना था, "क्रांति पर पकड़ कायम रखो, उत्पादकता को बढ़ाओ।" इसी प्रकार, जहां माओ नैतिक प्रोत्साहन पर जोर देते थे, वहीं देंङ भौतिक प्रोत्साहन पर जोर देता था। जहां माओ का कहना था कि हमारे विशेषज्ञ, विशेषज्ञ होने के साथ साथ "लाल" यानी कम्युनिस्ट भी होने चाहिए वहीं देंङ की मशहूर यह उक्ति, "इससे फर्क नहीं पड़ता कि बिल्ली काली है या सफेद, उसे चूहा पकड़ना आना चाहिए।" यानी विशेषज्ञ के दृष्टिकोण से देंङ को कोई मतलब नहीं था।

समाजवादी समाज में जारी वर्ग संघर्ष में सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व को जीवन के हर क्षेत्र में लागू करने तथा पूंजीवादी पुनर्स्थापना को रोकने का एक सैद्धान्तिक हथियार महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के बतौर माओ ने दिया था। उन्होंने अपने जीवन के अंतिम क्षणों तक इसका नेतृत्व भी किया था।

लेकिन सी.पी.आई. (एम) का संशोधनवादी नेतृत्व इसे समझ नहीं सकता। क्योंकि वह इसे समझना ही नहीं चाहता। उसे देंङ का "बाजार समाजवाद", "चीनी विशिष्टताओं वाला समाजवाद" समाजवाद ही नजर आता है। वह इसे शायद तब तक समाजवाद कहता रहे, जब तक चीन की संशोधनवादी कम्युनिस्ट पार्टी खुद ही उसे समाजवाद कहना बंद न कर दे। ठीक गोर्बाचोव की तरह।

सी.पी.आई. (एम) का नेतृत्व वियतनाम, कोरियाई जन गणराज्य और क्यूबा में अभी भी समाजवाद देखता है हालांकि इन सभी जगहों में बहुत समय पहले ही पूंजीवाद साफ-साफ स्थापित हो चुका है।

B- भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माले-लिबरेशन)

मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा को अपना पथ प्रदर्शक सिद्धान्त मानने वाली अन्य पार्टियों की तरह 'लिबरेशन' भी यह मानता था कि ख्रुश्चोवी संशोधनवाद के सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी में हावी हो जाने के साथ सोवियत संघ में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना हो गयी थी तथा 1968 में चेकोस्लोवाकिया पर आक्रमण के साथ यह सामाजिक साम्राज्यवाद में तब्दील हो गया था। सोवियत समाज समाजवादी समाज नहीं रह गया था। सोवियत संघ कथनी में समाजवादी और करनी में साम्राज्यवादी हो गया था।

लेकिन गोर्बाचोव के सत्ता में आने के बाद लिबरेशन का रुख बदलने लगा था। इसने 1988 में अपनी पार्टी की चौथी कांग्रेस में सोवियत संघ के उत्पादन सम्बन्धों को मोटे तौर पर समाजवादी कहना शुरू कर दिया। इसके अनुसार सोवियत उत्पादन सम्बन्धों में नौकरशही की विकृतियां थीं। इसने गोर्बाचोव द्वारा किये जा रहे सुधारों का सोवियत संघ में सकारात्मक परिवर्तन के बतौर स्वागत किया था।

चौथी कांग्रेस में सोवियत संघ में पूंजीवादी पुनर्स्थापना की पहले की अवस्थिति से पीछे हट कर अचानक समाजवाद कहने पर कुछ लोगों द्वारा सवाल उठाने पर उस समय के महासचिव विनोद मिश्र ने यह जवाब दिया था :

> "यहां हमने सोवियत अर्थतंत्र के बारे में विस्तार से चर्चा क्यों नहीं की? कारण यह है कि सोवियत संघ को सामाजिक साम्राज्यवादी का खिताब देते वक्त **हमने यह दावा नहीं किया कि उसका अर्थतंत्र समाजवादी नहीं है;** या हमने उन लोगों की नकल नहीं की जो सोवियत संघ को क्रांति-परवर्ती समाज या राज्यवादी समाज बताते हैं। हमने एक दूसरी चीज को, उनकी बाहरी करतूतों को प्रस्थान बिंदु बनाया था मसलन चेकोस्लोवाकिया पर हमला वगैरह। और **अपनी गलती को सुधारते वक्त भी हमने यह नहीं कहा है कि सोवियत अर्थतंत्र में कोई परिवर्तन हुआ है-वह पहले सामाजिक साम्राज्यवादी अर्थतंत्र और अब उसका समाजवादी अर्थतंत्र में रूपान्तर हो गया है।** बल्कि सोवियत के चरित्र निर्धारण के सम्बन्ध में हमारी मुख्य गलती यही थी कि हमने उसके आर्थिक आधार के विश्लेषण को, उसके उत्पादन सम्बन्धों को मद्देनजर नहीं रखा। राजनीतिक सांगठनिक रिपोर्ट में इस बात पर जोर दिया गया है कि सोवियत संघ का आर्थिक आधार समाजवादी है, पर उसमें विकृतियां मौजूद रह सकती हैं।" (चौथी कांग्रेस के दस्तावेज, पृष्ठ. 1.7.1 जोर हमारा)
>
> "क्या रूस को समाजवादी के बतौर मानने के साथ-साथ "प्रभुत्ववादी" या अतिमहाशक्ति जैसे विशेषणों को वापस ले लेना चाहिए? हमारी मान्यता यह है कि "प्रभुत्ववादी" या "अतिमहाशक्ति" की परिघटना कुछ ऊपरी ढांचे के पहलुओं से सम्बन्धित है, अंतर्वस्तु के तौर पर यह परिघटना आर्थिक आधार से नहीं जुड़ी है।" (वही, पृ.1.7.2)
>
> "फिर भी हमें सोवियत संघ को 'प्रभुत्ववादी' या "अतिमहाशक्ति" कहने के पीछे आर्थिक आधार नहीं खोजना चाहिए, क्योंकि यही गलती हमें रूस को सामाजिक साम्राज्यवादी बताने की ओर ले गयी थी।" (वही, पृष्ठ 1.7.3)

इसकी बात का प्रकारान्तर से मतलब है कि वह हमेशा से सोवियत संघ को समाजवादी मानता रहा है। यह प्रकारान्तर से महान बहस में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की अवस्थिति को भी गलत मानता है। '**महान बहस**' में कहा गया था कि ख्रुश्चोवी संशोधनवाद के साथ सोवियत संघ में पूंजीवाद की स्थापना हो गयी थी। यह प्रकारान्तर से **महान बहस** की तीसरी टिप्पणी का भी निषेध है जिसमें युगोस्लाविया में पूंजीवादी पुनर्स्थापना को साबित किया गया था। कुल मिलाकर यह समूचे **महान बहस** की आत्मा का निषेध है, और सांस्कृतिक क्रांति का भी। इसके बावजूद भी लिबरेशन माओ विचारधारा की माला जपता रहता है।

इससे पहले वह माओ की मृत्यु के बाद देंङ के चीन को समाजवादी कह चुका था। वह सांस्कृतिक क्रांति के सवाल पर चुप्पी साधे हुए था। अब इसकी निगाह में गोर्बाचोव काल तक सोवियत संघ समाजवादी देश हो चुका था। 1976 के बाद का चीन भी समाजवादी था। लेकिन लिबरेशन की चौथी कांग्रेस के दस्तावेज में ऐसी प्रस्थापनायें पेश की गयी थीं जो सीधे-सीधे सांस्कृतिक क्रांति व **महान बहस** की प्रस्थापनाओं की विरोधी हैं।

> **"वैज्ञानिक समाजवाद तो इसीलिए वैज्ञानिक कहलाता है क्योकि वह पूंजीवादी समाज के गर्भ से पैदा होने वाली एक नयी व्यवस्था के उदय की बिलकुल सही तस्वीर आंकता है। चूंकि यह नयी व्यवस्था पूंजीवादी समाज के रूपान्तरण की प्रक्रिया में विकसित होती है इसलिए इसके साथ अनेक अशुद्धियां और विकृतियां भी जुड़ी होती हैं - फिर नेतृत्व की गलतियां इन विकृतियों को और जटिल बना देती हैं।** *लेकिन समाजवादी व्यवस्था के पास अपना शक्तिशाली भौतिक आधार होता है; अपनी विकसित वर्ग शक्ति और कम्युनिस्ट पार्टी होती हैं; पुरानी व्यवस्था का ध्वंस करके कायम की गई नयी राज्य सत्ता होती है; और इसीलिए पूंजीवाद के खिलाफ इसके ऐतिहासिक अभियान की दिशा उल्टी नहीं जा सकती।* **धक्के के विभिन्न दौर समाजवाद की महायात्रा में बस छोटेमोटे ठहराव कहे जा सकते हैं।** (वही, पृष्ठ 1.1.14 जोर मूल में, इटैलिक्स हमारा)

ऊपर इटैलिक्स (तिरछे) किये गये वाक्य सांस्कृतिक क्रांति की मूल धारणा का ही निषेध हैं। सांस्कृतिक क्रांति और महान बहस में माओ ने यही स्थापित किया था कि समाजवादी समाज में वर्ग संघर्ष जारी रहता है तथा यदि पूंजीवादी तत्वों को खत्म नहीं किया गया, उन पर रोक नहीं लगायी गयी तो पूंजीवाद की पुनर्स्थापना कभी भी हो सकती है। इसी को रोकने के उपाय के बतौर माओ ने महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति की अवधारणा पेश की और इसकी शुरुआत की। माओ ने यहां तक कहा कि ऐसी कई सांस्कृतिक क्रांतियों की आवश्यकता होगी। उन्होंने इस बात को बार-बार रेखांकित किया कि अभी यह नहीं तय हुआ है कि पूंजीवाद और समाजवाद में कौन

विजयी होगा। उन्होंने जनता तथा क्रांतिकारी कतारों का आह्वान किया कि वे हर दिन, हर घंटे, हर क्षण इसे दुहरायें और याद रखें। अब लिबरेशन यह कहता है कि पूंजीवाद के खिलाफ समाजवादी अभियान की दिशा उल्टी नही जा सकती। समाजवाद एक बार विजयी हो गया तो हो गया। पूंजीवाद की पुनर्स्थापना होना असंभव है।

इसके बावजूद लिबरेशन अपने को माओ विचारधारा का अनुयायी कहता है।

लिबरेशन की इस घोषणा के दो साल बाद पूर्वी यूरोप में तथा चार साल बाद सोवियत संघ में, इसका तथाकथित समाजवाद ध्वस्त हो गया। यानी राजकीय पूंजीवाद खुले पूंजीवाद में तब्दील हो गया। लिबरेशन के दृष्टिकोण से उसके समाजवाद की "पूंजीवाद के हाथों विश्व ऐतिहासिक पराजय हो गयी।"

लिबरेशन अपनी पांचवीं कांग्रेस में सोवियत संघ के पतन का कारण उसके राजकीय पतन के कारण में नहीं बल्कि "जीवन शक्ति" खो चुकी और जड़ बन चुकी "समाजवादी" व्यवस्था में ढूंढ़ता है।

1988 में जो संगठन यह कह रहा था कि समाजवादी व्यवस्थाओं के खात्मे की बात कर "अति वामपंथी" और अति दक्षिणपंथी एक ही जगह पर खड़े हो जाते हैं, वहीं संगठन 1989-92 के काल में दक्षिणपंथियों की जमात में शामिल होकर यह कहने लगा कि पूर्वी यूरोप व सोवियत संघ की घटनायें यह साबित करती हैं कि समाजवाद फेल हो गया है, एक व्यवस्था के तौर पर समाजवाद व कम्युनिज्म असफल साबित हुआ है।

इस तरह हम देख सकते हैं कि सी.पी.आई. (एम.एल.-लिबरेशन) का अवसरवाद व सारसंग्रहवाद चौथी कांग्रेस तक पूर्णतया मुकम्मल हो जाता है। पहले वह देंङ द्वारा पूंजीवादी पुनर्स्थापना के बाद के चीन को समाजवाद की संज्ञा देता है, फिर वह सोवियत संघ में ख्रुश्चोवी पूंजीवादी पुनर्स्थापना से इंकार करके उसे समाजवाद कहना शुरू करता है और इस सम्बन्ध में कई कलाबाजियां खाते हुए गोर्बाचोव के सुधारों का समर्थन करता है। वह समाजवाद की ऐसी व्याख्या करता है कि यदि वह एक बार आ जाय तो वह पीछे की ओर नहीं जा सकता। यह सब वह माओ विचारधारा के नाम पर करता है। जब पूर्वी यूरोप में राजकीय पूंजीवादी सत्ताओं का पतन होता है और सोवियत संघ का विघटन होता है तो वह इसे समाजवाद की पराजय कहता है।

इस प्रकार लिबरेशन मार्क्सवाद-लेनिनवाद माओ विचारधारा को छोड़कर एक संशोधनवादी विचारधारा की अपनी यात्रा पूरी करता है। यह संगठन अपने पार्टी कार्यक्रम और अन्य दस्तावेजों में क्रांति के रास्ते को पहले ही छोड़ चुका था। अब इसके लिए सी.पी.आई. और सी.पी.आई. (एम.) संशोधनवादी पार्टियां नहीं बल्कि वाम महासंघ के इसके कारवां में चलने वाली पार्टियां बन जाती हैं।

C.

इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे संगठन हैं जो रूस में पूंजीवादी पुनर्स्थापना को ख्रुश्चोवी संशोधनवाद के साथ तो देखते हैं लेकिन वे चीन के मौजूदा समाज को भी समाजवादी समाज समझते हैं। ऐसे संगठन न तो समाजवादी समाज के चरित्र को समझते हैं और न ही पूंजीवादी पुनर्स्थापना को रोकने के लिए महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति की भूमिका को समझते हैं।

कुछ ऐसे संगठन हैं जो पार्टी और वर्ग के आपसी रिश्तों में गड्डमड्ड करते हैं और गड़बड़ी की जड़ उनके अनुसार वहां है जहां सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व का स्थान पार्टी के अधिनायकत्व ने ले लिया था। वे पार्टी, सोवियतों, ट्रेड यूनियनों और अन्य संगठनों के आपसी सम्बन्धों में पार्टी की नेतृत्वकारी भूमिका को नहीं समझ पाते। इनकी यह अजीबोगरीब धारणा है कि जब तक सर्वहारा वर्ग पार्टी की जगह खुद नहीं शासन करने लगेगा तब तक पार्टी व राज्य से वर्ग का अलगाव नहीं दूर होगा और पूंजीवादी पुनर्स्थापना का खतरा बना रहेगा। इसलिए ऐसे संगठन की निगाह में चीन की महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति भी अपने तमाम योगदानों के साथ इस समस्या का समाधान नही कर पायी।

यहां यह ध्यान में रखने की बात है कि यह प्रश्न व्यावहारिक रूप में लेनिन के सामने उपस्थित हुआ था। 1921 में 10वीं पार्टी कांग्रेस में लेनिन ने कहा था कि सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व कम्युनिस्ट पार्टी के माध्यम के बिना काम नहीं करेगा,

> "इसका मतलब यह नहीं होता कि पार्टी सर्वहारा के बदले अधिनायकत्व लागू करती है या कि पार्टी अधिनायकत्व को लागू करने में सर्वहारा से किसी तरह पृथक है। वे स्पष्ट करते हैं कि अधिनायकत्व सर्वहारा वर्ग ही लागू करता है, लेकिन वह इसे बिना पार्टी के नेतृत्व के लागू नहीं कर सकता।" (Lenin's Speeches at 10th Party Congress in March,1921, अनुवाद हमारा)
>
> आगे
>
> "... ... ... पार्टी, कहा जा सकता है कि सर्वहारा के अगुवा दस्ते को जज्ब कर लेती है और यह अगुवा दस्ता सर्वहारा के अधिनायकत्व को लागू करता है। ट्रेड यूनियनों की तरह की आधारशिला के बगैर अधिनायकत्व लागू नहीं किया जा सकता या राज्य के कार्य पूरे नहीं किये जा सकते। और ये कार्य नयी प्रकार की विशेष संस्थाओं के माध्यम से अर्थात सोवियतों के माध्यम से लागू किये जाते हैं।
>
> (The Trade Union, the Present situation and Trotsky's Mistakes, Lenin, CW, Vol.32, Page 20, अनुवाद हमारा)

और आगे स्तालिन कहते हैं,

" 'पार्टी सर्वहारा के वर्ग संगठन का उच्चतम रूप है-लेनिन। निष्कर्ष में **ट्रेड यूनियनें,** सर्वहारा के जनसंगठनों के रूप में पार्टी को वर्ग से जोड़ती हैं, प्राथमिक तौर पर, उत्पादन के क्षेत्र में; **सोवियतें** मेहनतकश जनता के जनसंगठन के रूप में, पार्टी को उससे जोड़ती हैं, प्राथमिक तौर पर राज्य शासन के क्षेत्र में; **सहकारी संस्थायें** मुख्यतया किसानों के जनसंगठनों के रूप में, पार्टी को किसानों से जोड़ती है, प्राथमिक तौर पर आर्थिक क्षेत्र में, समाजवादी निर्माण के कार्य में किसानों को खींचने के लिए; **युवा लीग का**, युवा मजदूरों और किसानों के जनसंगठन के रूप में; उद्देश्य है सर्वहारा के अगुवा दस्ते को नयी पीढ़ी की समाजवादी शिक्षा तथा युवा कार्यकर्ताओं की ट्रेनिंग के काम में सहायता पहुंचाना, और अंत में, पार्टी का, सर्वहारा की तानाशाही की व्यवस्था में मुख्य निर्देशन शक्ति के रूप में, उद्देश्य इन सभी जनसंगठनों का नेतृत्व करना है- ऐसा है, सामान्य तौर पर तानाशाही की "कार्यप्रणाली" की तस्वीर।" "सर्वहारा की तानाशाही की व्यवस्था की तस्वीर।" (स्तालिन : 'लेनिनवाद की मूल समस्यायें', सोशलिस्ट पब्लिकेशन्स सेंटर, कानपुर, पृष्ठ-29, जोर मूल में)

पार्टी की नेतृत्वकारी भूमिका के बिना सर्वहारा वर्ग सीधे तानाशाही लागू नहीं कर सकता। इसके बारे में लेनिन कहते हैं :

"... ... ... सभी पूंजीवादी देशों में (और मात्र यहां जो सबसे पिछड़े हुए में एक है) सर्वहारा अभी भी इतना विभाजित है, इतना पतित है और अंशतः इतना भ्रष्ट है (कुछ देशों में साम्राज्यवाद द्वारा) कि समग्र सर्वहारा को शामिल करने वाला कोई संगठन (यहां लेनिन विशेषतौर पर ट्रेड यूनियनों की ओर इंगित कर रहे हैं-लाल सलाम) सीधे सर्वहारा की तानाशाही लागू नहीं कर सकता। इसे अगुवा दस्ते द्वारा ही लागू किया जा सकता है जिसने इस वर्ग की क्रांतिकारी ऊर्जा को जज्ब कर लिया हो। (The Trade union, the present situation and Trotsky's Mistakes, Lenin, CW32 Page 21 अनुवाद हमारा)

एक अलग संदर्भ में लेनिन कहते हैं :

"पार्टी का अधिनायकत्व हो **या** वर्ग का अधिनायकत्व? नेताओं का अधिनायकत्व (पार्टी) हो **या** जनसाधारण का अधिनायकत्व (पार्टी)?" सवाल को इस तरह से पेश करना ही दिमाग के नितांत अविश्वसनीय तथा अपार उलझाव का प्रमाण है। ये लोग कोई असाधारण बात **खोज निकालने** की कोशिश कर रहे हैं और कुतर्क करने की अपनी कोशिश में हास्यास्पद बन जाते हैं। हर आदमी जानता है कि जन साधारण वर्गों में बंटे हुए हैं, कि वर्गों के मुकाबले में जनसाधारण को केवल उसी समय रखा जा सकता है, जब समाज की उत्पादन व्यवस्था में हैसियत आधारित भेदों को भुलाकर आम तौर पर विशाल बहुसंख्या के मुकाबले में समाज की उत्पादन व्यवस्था में निश्चित हैसियत रखने वाली श्रेणियों को रखा जाये; कि आम तौर पर से अधिकतर स्थानों पर, कम से कम आधुनिक सभ्य देशों में वर्गों का नेतृत्व राजनीतिक पार्टियां करती हैं, कि राजनीतिक पार्टियों का संचालन प्रायः उनके सबसे अधिक मान्य, प्रभावशाली एवं अनुभवी सदस्यों के कमोबेश स्थायी समूह करते हैं, जिनको पार्टियों के सबसे जिम्मेदार पदों पर चुना जाता है और जो नेता कहलाते हैं। ये सारी बातें ककहरा हैं। ये सब बहुत सीधी और स्पष्ट बातें हैं। इसकी जगह कोई अनाप-शनाप बात करने, कोई नया बोलाप्यूक रखने की क्या जरूरत है? ... ..." (लेनिन, 'वामपंथी कम्युनिज्म एक बचकाना मर्ज', संकलित रचनायें, दस खंडों में, खंड 9, पृष्ठ 274, जोर मूल में)

लेनिन और स्तालिन के इन उद्धरणों के बाद पार्टी की नेतृत्वकारी भूमिका और वर्ग के साथ पार्टी के घनिष्ठ रिश्तों के सम्बन्ध में और कुछ तर्क देने की आवश्यकता नहीं रह जाती। अतः पार्टी और वर्गों के बीच अलगाव की बात करने और उसका समाधान महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के अंदर न देखने की बात करना गलत है।

V

अंत में, ख्रुश्चोवी पूंजीवादी पुनर्स्थापना की अलग अलग गैर सर्वहारा दृष्टिकोणों की समझ में मोटे तौर पर एक समानता दिखती है, वह यह है कि सभी उत्पादक शक्तियों के विकास को समाजवाद की सफलता असफलता का मुख्य कारक मानते रहे हैं। समाजवादी समाज में उत्पादन सम्बन्धों में निरंतर क्रांतिकारीकरण करने की जरूरत से वे इंकार करते रहे हैं। उत्पादन के साधनों पर एक बार सामाजिक मालिकाना हो जाने के बाद भी लोगों के उत्पादन प्रक्रिया में आपसी सम्बन्धों और वितरण के सवाल पर क्रांतिकारी रूपान्तरण की जरूरत बनी रहती है। उत्पादन सम्बन्धों के इन क्षेत्रों में लगातार क्रांतिकारी रूपान्तरण करके उत्पादक शक्तियों के विकास का रास्ता खुलता है। यह रास्ता समाजवाद से कम्युनिज्म की ओर ले जाने वाला रास्ता है। इसके विपरीत उत्पादक शक्तियों के विकास पर ज्यादा जोर देने का रास्ता, समाजवादी समाज को पश्चगति में धकेलने का रास्ता है। बगैर उत्पादन सम्बन्धों में क्रांतिकारी रूपान्तरण की प्रक्रिया को आगे बढ़ाये उत्पादक शक्तियों पर अति जोर पूंजीवादी उत्पादन सम्बन्धों की ओर ले जा सकता है। इसी के साथ समाजवादी समाज में यदि अधिरचना के हर क्षेत्र में सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व को नहीं लागू किया गया तो मूलाधार भी बदल सकता है। यह विपरीत दिशा में जा सकता है।

अंततः यह दो विश्व दृष्टिकोणों के बीच, दो विपरीत वर्गों द्वारा अपने अपने दृष्टिकोण से दुनिया को बदलने का मामला है। पूंजीपति वर्ग अपने हिसाब से, अपने दृष्टिकोण से वर्तमान पूंजीवादी दुनिया को संचालित करना चाहता है और सर्वहारा वर्ग अपने दृष्टिकोण से पूंजीवादी दुनिया को ध्वस्त कर कम्युनिज्म की स्थापना चाहता है। सर्वहारा वर्ग का ऐतिहासिक मिशन है-कम्युनिज्म। पूंजीवाद से कम्युनिज्म की यात्रा में समाजवाद उसके बीच की ऐसी मंजिल है जो एक जगह ठहरी नहीं रह सकती। यदि वह कम्युनिज्म की ओर नहीं गयी तो वह

फिर से पूंजीवाद की ओर वापस लौटने को अभिशप्त होगी। इसलिए समाजवाद का समूचा दौर तीखे वर्ग संघर्षों और उथल-पुथल से भरा होगा। इसे कई महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांतियों से गुजरना होगा।

ख्रुश्चोवी पूंजीवादी पुनर्स्थापना के बाद उससे निपटने का, पूंजीवादी पुनर्स्थापना रोकने का महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के रूप में वह हथियार विश्व सर्वहारा वर्ग को मिल गया है जिसकी रोशनी में आगे की यात्रा सर्वहारा वर्ग कर सकता है।

■■■